काँपती क्यों है ?

जगतराम आर्य

प्रकाशक
जगतराम एण्ड संस
24/4855 अंसारी रोड, दरियागंज
नयी दिल्ली-110002

संस्करण
2000

कला-पक्ष
श्याम

मूल्य
चालीस रुपये

शब्द-संयोजक
सोनी कम्प्यूटर्स
24/4855, अंसारी रोड, दरियागंज
नयी दिल्ली-110002

मुद्रक
एस०एन० प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

DHARTI KAANPATI KYON HAI (Hindi)
by Jagat Ram Arya
Price Rs 40 00

क्रम

पृथ्वी की उत्पत्ति

सर्वप्रथम आकाश में मात्र एक सूर्य ही उत्पन्न हुआ और करोड़ों-करोड़ वर्षों तक इसके द्वारा प्रकाश चारों दिशाओं में फैलाया जाता रहा। साथ ही इसके भीतर विघटन क्रिया भी चलती रही।

निरन्तर विघटन क्रिया करोड़ों वर्षों तक चली और इसका परिणाम यह हुआ कि सूर्य के भाग टूट-टूटकर उसके चारों ओर बिखर गए और दिशाहीन हो इधर-उधर घूमते रहे। कभी-कभी वे परस्पर टकराते, पुनः टूटते या फिर टकराते और संयुक्त हो जाते। कालान्तर में इनकी संख्या मात्र नौ रह गई जो कि सूर्य की परिक्रमा अपने-अपने नियत मार्ग पर करने लगे।

जब इन नौ खण्डों का मार्ग निश्चित हो गया तो इनके आपस में टकराने की सम्भावना भी समाप्त हो गई। परन्तु इनके परिक्रमा क्षेत्र के बाहरी भाग से समय-समय पर उल्काएँ इनके परिक्रमा क्षेत्र में गिरतीं और किसी भी खण्ड से टकराव होने पर जोरदार धमाके होते, विघटन होता या फिर उस भाग पर टकराव के कारण गहरे गोलाकार गड्ढे पड़ जाते।

सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने वाले इन विघटित नौ खण्डों को ग्रहों का नाम दिया गया, जिनके नाम इस प्रकार हैं : बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यून और

प्लूटो । इनमें बुध ग्रह सूर्य के सबसे अधिक निकट है
सबसे अधिक दूरी पर । ये सभी ग्रह अपने-अपने
निरन्तर सूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं और साथ ही
केन्द्र के चारों ओर भी घूम रहे हैं, अर्थात् इन सभ
दिन-रात होते हैं तथा प्रत्येक ग्रह के वर्ष की अवधि अ
भिन्न है, जैसा कि अग्र सारणी द्वारा स्पष्ट हो जाता है

(1) **बुध (Mercury)**—इस ग्रह पर एक दि
58 दिन 8 घंटे के बराबर का होता है और हमारे 8
एक वर्ष होता है । यह सूर्य के सबसे निकट है
सौरमण्डल का प्रथम ग्रह है । इस ग्रह पर तापमान
होता है ।

(2) **शुक्र (Venus)**—यह ग्रह हमारे सौरमण्डल

ग्रह है इस ग्रह का एक दिन पृथ्वी के 243 दिन के बराबर होता है और इसका एक वर्ष 224 दिन के बराबर होता है इसका अर्थ यह हुआ कि यह ग्रह दिन समाप्त होने से पहले ही सूर्य की एक परिक्रमा कर लेता है ।

(3) पृथ्वी (Earth)—हमारे इस ग्रह पर दिन 24 घंटे का तथा वर्ष 365¼ दिन का होता है । इसका एक उपग्रह चाँद है ।

(4) मंगल (Mars)—इस ग्रह पर दिन 24 घंटे का होता है और वर्ष हमारे 687 दिन के बराबर होता है ।

(5) बृहस्पति (Jupiter)—इस ग्रह पर दिन 9 घंटे 56 मिनट का तथा वर्ष हमारे 11.86 वर्षों के बराबर होता है । इस ग्रह के 12 चाँद हैं ।

(6) शनि (Saturn)—इस ग्रह पर दिन 10 घंटे का होता है और वर्ष हमारे 29 वर्षों के बराबर होता है । इस ग्रह के 9 चॉद हैं ।

(7) यूरेनस (Uranus)—इस ग्रह पर दिन 10 घंटे 45 मिनट का होता है और एक वर्ष हमारे 84 वर्षों के बराबर है । इस ग्रह के 5 चाँद हैं ।

(8) नेपच्यून (Naptune)—इस ग्रह पर दिन लगभग 16 घंटे का होता है और वर्ष हमारे 90,000 दिनों के बराबर होता है या यूँ कहें कि हमारे 164¾ वर्ष होंगे तो इस ग्रह पर एक वर्ष होगा । इस ग्रह के 2 चाँद हैं तथा इस पर 6,000 मील मोटी बर्फ की परत है ।

(9) प्लूटो (Pluto)—इस ग्रह पर दिन हमारे 6 दिन 9

; बराबर होता है और एक वर्ष हमारे 248 वर्षों
है । यह ग्रह सौरमण्डल का बाहरी ग्रह है । इ
ो दूरी सबसे अधिक है ।
;स प्रकार हमने जाना कि सौरमण्डल, जो वि
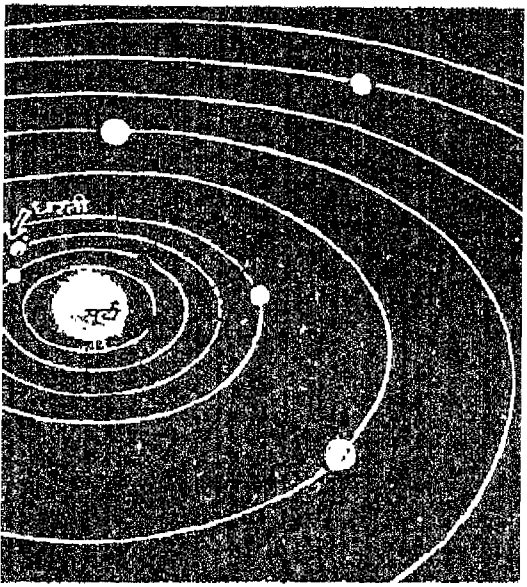
ार विघटन से बना, उसमें जो भी नौ ग्रह हैं, प्रत्ये
वर्ष की अवधि अलग-अलग है । प्रत्येक ग्रह पर
ान है तथा भिन्न-भिन्न परिस्थितियाँ हैं । हमारे सौर
ग के करोड़ों वर्षों बाद तक भी ये सभी ग्रह निरन्त
मा करते रहे, परन्तु किसी भी ग्रह पर जीवन की
आवश्यक तत्त्वों की उपस्थिति संभव नहीं हो पा
रिक्ष भाग से उल्काएँ टूट-टूटकर गिरतीं तथा उ
ा पिण्डों का टकराव किसी भी ग्रह से होना
स्वरूप या तो ग्रह खण्डित होकर विभाजित हे

विभाजित न होकर इस टकराव के कारण उसकी ऊपरी सतह पर गहरे व गोल बहुत बड़े-बड़े गड्ढे पड़ जाते और धूल-मिट्टी का तूफान वातावरण में उठ खड़ा होता। यदि ग्रह विभाजित होता तो मुख्य भाग अपने नियत मार्ग पर सूर्य की परिक्रमा करता रहता तथा विभाजित भाग मुख्य ग्रह की परिक्रमा करने लगता तथा मुख्य ग्रह का उपग्रह बन जाता। हमारे सौरमण्डल में ग्रहों के उपग्रह इसी क्रिया के कारण उत्पन्न हुए हैं, जो कि अपने-अपने मुख्य ग्रहों की निरन्तर परिक्रमा कर रहे हैं।

हमारी पृथ्वी, जो कि सूर्य के विघटन से उत्पन्न हुई है तथा जिसके विभाजित होने से इसका उपग्रह चन्द्रमा उत्पन्न हुआ है, प्रारम्भ में सूर्य की भाँति ही थी, परन्तु समय के अन्तराल में इसकी ऊपरी सतह ठण्डी पड़ने लगी जबकि रासायनिक क्रियाएँ इसके भीतरी गर्म व द्रव्य भाग में चलती रहीं। पृथ्वी का द्रव्य भाग मुख्यतः भारी धातुओं से बना है, इसी कारण यह अन्दर से आज भी गर्म है। दूसरी ओर चन्द्रमा हल्की धातुओं के द्रव्य से बना होने के कारण शीघ्र ठंडा हो गया। यही कारण है कि यह उपग्रह आज तक निर्जीव व जीवनरहित है।

वास्तव में प्रारम्भ में पृथ्वी के चारों ओर नाइट्रोजन व हाइड्रोजन द्वारा निर्मित वातावरण था तथा इसके भीतरी भाग से विघटन के द्वारा छोड़ी गई गैसों में ऑक्सीजन की प्रचुर मात्रा होने के कारण हमारे वातावरण में धीरे-धीरे ऑक्सीजन गैस की मात्रा बढ़ने लगी।

पृथ्वी के अन्दर जो भी तत्त्व व रसायन थे, उनके आपस में

क्रियाशील होने के कारण जो ऑक्सीजन वातावरण में प्रवेश करती, उसकी क्रिया वातावरण की हाइड्रोजन गैस से सम्भवतः वातावरण में चमकने वाली बिजली द्वारा सम्पूर्ण होती । और इस प्रकार वातावरण में बड़ी संख्या में बादल उत्पन्न हुए, वर्षा हुई जो कि मात्रा में इतनी अधिक थी कि पृथ्वी की ऊपरी सतह पर स्थान-स्थान पर दलदल हो गई और यही प्रक्रिया अनेक युगो

तक चली । इसी दलदल में पृथ्वी के सर्वप्रथम निवासी कीटाणु तथा अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ तथा घास-फूस उपजे । पृथ्वी की सतह पर ये अदृश्य व छोटे-छोटे जीव तथा वनस्पातियाँ प्रकृति की प्रथम पैदावार, उपज या सन्तानें कही जा सकती हैं और इन्हीं वनस्पतियों तथा सूक्ष्म जीवों में विघटन तथा बदलाव अति मध्यम गति से हुआ । ये प्राथमिक वनस्पतियाँ तथा जीव वातावरण की नाइट्रोजन गैस पर जीवित रहा करते थे अनेक

यह प्रक्रिया प्रगति करती रही और वनस्पतियाँ तथा जीव
नी जातियों में उन्नति करते रहे । साथ ही साथ
में ऑक्सीजन की मात्रा भी धीरे-धीरे बढ़ती रही । इसी
नेक दूसरे जीव भी पृथ्वी पर प्रकट हुए जो अपना
ग वायुमण्डल की नाइट्रोजन तथा पृथ्वी की वनस्पतियों

रहे । यह प्रक्रिया लगभग करोड़ों वर्ष चली और धीरे-
मण्डल में नाइट्रोजन का स्थान ऑक्सीजन ने ले
स बदलाव के कारण कई वनस्पतियाँ व जीव अपने
ीवित रखने में असमर्थ हो गए तथा उनकी जातियाँ
ईं । कुछ जीव व वनस्पतियाँ इस बदलाव को सहकर
को परिस्थितियों में ढाल पाए तथा विकसित हुए । यहीं

इसी समय से पृथ्वी पर जीवन-उत्पत्ति का युग आरम्भ हुआ
युग की वनस्पतियाँ, जीव तथा जन्तु वायुमण्डल की ऑक
द्वारा जीवित रहने की चेष्टा में सफल हुए तथा उनकी ज
उन्नति करने लगीं । प्रत्येक नई पीढ़ी की पैदावार अपनी पि
पीढ़ी से उत्तम व शक्तिशाली बनती रही ।

हमारा सौरमण्डल मात्र कुछ दशकों या शताब्दियों में नि
नहीं हुआ । इसके निर्माण एवं वर्तमान स्थिति में पहुँचने
हमारे सौरमण्डल ने करोड़ों-अरबों वर्षों की यात्रा तय की
इसी प्रकार हमारी पृथ्वी ने भी वर्तमान काल तक पहुँचने के
करोड़ों-अरबों वर्षों की यात्रा तय की और अब भी निरन्तर
मार्ग पर अग्रसर है ।

ग्रह	व्यास	दिन की अवधि (पृथ्वी के संदर्भ में)	वर्ष की अवधि
बुध	2,700 कि०मी०	58 दिन 8 घंटे	88 दिन
शुक्र	7,200 कि०मी०	243 दिन	224 दिन
पृथ्वी	7,200 कि०मी०	24 घंटे	365¼ दिन
मगल	3,870 कि०मी०	24 घंटे	687 दिन
बृहस्पति	82,533 कि०मी०	9 घंटे 56 मि०	11.86 वर्ष
शनि	63,900 कि०मी०	10 घंटे	29 वर्ष
यूरेनस	31,250 कि०मी०	10 घंटे 45 मि०	84 वर्ष
नेपच्यून	33,525 कि०मी०	16 घंटे	164.75 वर्ष
प्लूटो	3,235 कि०मी०	6 दिन 9 घंटे	248 वर्ष

दी गई सारणी कुछ तथ्य उजागर करती है, जो निम्न :

हमारे सौरमण्डल का सबसे छोटा ग्रह बुध है ।
हमारे सौरमण्डल में सबसे अधिक तापमान बुध ग्रह पर है ।
बुध ग्रह पर वर्ष की अवधि सबसे कम है ।
शुक्र ग्रह हमारे सौरमण्डल में एक ऐसा ग्रह है, जिसका दिन बड़ा तथा वर्ष छोटा है ।
प्लूटो ग्रह सूर्य के चारों ओर अति धीमी गति से परिक्रमा कर रहा है ।
बृहस्पति ग्रह पर दिन की अवधि सबसे कम है ।
पृथ्वी की रचना एक विचित्र रचना है । यह हमारे सौरमण्डल का एक विशेष तथा विचित्र ग्रह है ।
हमारी पृथ्वी सौरमण्डल का एकमात्र ऐसा ग्रह है, जिस पर विविध प्रकार की वनस्पतियाँ तथा जीव-जन्तु उत्पन्न और विकसित हुए हैं । हमारी पृथ्वी ही सौरमण्डल का एकमात्र ऐसा ग्रह है, जिसके चारों ओर वायुमण्डल है । साथ ही पृथ्वी ही एक ऐसा सौर ग्रह है, जिस पर जल उपलब्ध है । यही कारण है कि इन तथ्यों के आधार पर हमारी पृथ्वी को एक विचित्र व एकमात्र जीवनयुक्त ग्रह की संज्ञा दी गई है ।

पृथ्वी की रचना

हमारी पृथ्वी पर तीन भाग जल तथा एक भाग स्थल है । स्थल तथा जल भाग में सन्तुलन इस प्रकार बना हुआ है कि पृथ्वी अपनी निश्चित गति से निश्चित मार्ग पर सूर्य की परिक्रमा कर रही है और साथ ही अपने केन्द्र के चारों ओर घूम रही है ।

प्रकृति के इन विविध तथा अनुपम उपहारों के आधार पर ही हमारी इस पृथ्वी पर जीवन विकसित हुआ है । हमारी पृथ्वी करोड़ों वर्षों तक सौरमण्डल में घूमती रही तथा गर्म होने के कारण इस पर किसी प्रकार का जीवन विकसित नहीं हो पाया । इन्हीं करोड़ों वर्षों की अर्थहीन सूर्य-परिक्रमा के कारण इसका तापमान धीरे-धीरे कम होने लगा तथा इसकी ऊपरी सतह ठंडी होने लगी । करोड़ों वर्षों की अन्तहीन तपस्या के बाद ही इसकी ऊपरी सतह पर जल, वनस्पतियाँ व जीव प्रकट हुए ।

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति को लेकर बहुत-सी भ्रान्तियाँ हैं । यह कहना कि पृथ्वी पर सभी वनस्पतियाँ, जीव-जन्तु तथा जानवर एक साथ प्रकट हुए, एक विस्मयकारी कथन जान पड़ता है । वास्तव में पृथ्वी पर सर्वप्रथम कुछ वनस्पतियाँ तथा कुछ विकासशील स्वभाव के अति सूक्ष्म जीव ही उत्पन्न हुए उनमे युगों तक विकास की प्रक्रिया चलती रही धीरे धीरे उन जातियों

स्पतियाँ अपनी पूर्वज जातियों से अधिक सहनशील
होते रहे । इसी कारण वनस्पतियों व जीवों की
,गान्तर में सुधार आते रहे । उन्नत प्रकार की
जीव, जो कि समय के बदलाव के साथ परिस्थितियों
न सके व अपने आपको बदलती परिस्थितियों के
सके, वे जीवित रहे तथा अन्य जीव व वनस्पतियाँ
।

। आयु आज के विज्ञान अनुसन्धान के आधार पर
ब वर्ष की बताई जाती है । हमारी पृथ्वी पर जब
आया तो इस काल में पृथ्वी पूर्ण रूप से वनस्पति
ी हुई थी । परन्तु यहाँ इस बात को भी ध्यान में
वनस्पति युग आने से पूर्व पृथ्वी पर करोडों वर्षों तक

हिम युग ही चलता रहा। करोड़ों वर्षों तक पृथ्वी पर सूर्य तापमान के कारण धीरे-धीरे बर्फ पानी में बदलती, बादल बनते, बरसते तथा जल पृथ्वी के ढलवाँ क्षेत्रों में इकट्ठा होता, जम जाता तथा पुनः बर्फ में परिवर्तित हो जाता। परन्तु सूर्य की ऊपरी गर्मी तथा पृथ्वी के भीतर की गर्मी के कारण बर्फ की जल में परिवर्तित होने की क्रिया गतिमान थी तथा इस परिस्थिति में जल की पुनः बर्फ में बदलने की प्रक्रिया मंद पड़ गई। इसी कारण पृथ्वी पर जल तथा दलदल हो गई। इसी दलदली भूमि में विश्व की प्रथम वनस्पतियाँ व सूक्ष्म जीव उत्पन्न हुए।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि हमारी पृथ्वी का अपने केन्द्र के चारों ओर निरन्तर घूमना कुछ विशेष तत्त्वों के कारण ही सम्भव हुआ। इन तत्त्वों को प्राकृतिक शक्तियाँ भी कहा गया है। कुछ मुख्य शक्तियाँ, जो हमारी पृथ्वी को प्रभावित करती हैं, इस प्रकार हैं :

गुरुत्वाकर्षण शक्ति : हमारी पृथ्वी में यह शक्ति इसके जन्म के समय से ही है और इसी शक्ति के कारण हमारे वायुमण्डल में प्रत्येक स्वतन्त्र वस्तु को यह अपनी ओर आकर्षित करती है।

चुम्बकीय शक्ति : हमारी पृथ्वी एक विशालकाय चुम्बक की भाँति है तथा इसका उत्तरी ध्रुव चुम्बक से दक्षिणी ध्रुव की ओर मुखरित है और दक्षिणी ध्रुव उत्तर दिशा की ओर स्थित है। इस चुम्बकीय शक्ति का प्रभाव हमारी पृथ्वी की गति को निरन्तर प्रभावित करता है। यही कारण है कि हमारी पृथ्वी को

मनी एक परिक्रमा में चौबीस घंटे का समय लगता है । यह
ाय कभी न अधिक था न न्यून था । परन्तु यदि यह शक्ति
ग हो जाए तो इसका प्रभाव हमारे दिन के समय में अवश्य
गा और वह कम हो जाएगा ।
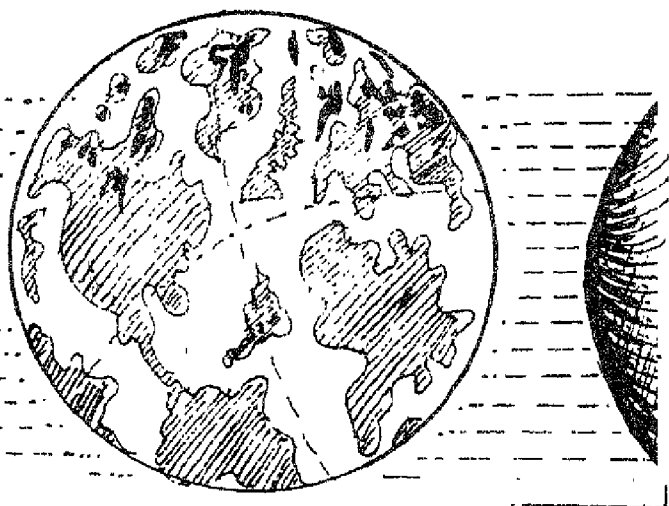
आकर्षण शक्ति : हमारी पृथ्वी पर सभी पिण्ड अन्य
ण्डों को एक विशेष प्रकार की आकर्षण शक्ति द्वारा अपनी
र आकर्षित करते हैं ।

उपरोक्त तीन मुख्य शक्तियाँ हमारी पृथ्वी के उपग्रह 'चन्द्रमा'
पृथ्वी-परिक्रमा को संचालित करती हैं । यही कारण है कि
स परिस्थिति में चन्द्रमा पृथ्वी के निकट होता है उस समय
ुद्र में अति ऊँची लहरें उठती हैं ।

घर्षण शक्ति : यह शक्ति निरन्तर पृथ्वी के चालन को

नियंत्रित करती है। इस शक्ति का हमारे ब्रह्माण्ड में सभी नक्षत्रों व उनके उपग्रहों पर प्रभाव है। तभी उनकी दोनों प्रकार की परिक्रमा-अवधियाँ निश्चित की जा सकी हैं। घर्षण शक्ति के कारण ही कालान्तर में प्रत्येक ग्रह का आकार गोलाई में आया है।

संतुलन शक्ति : यह शक्ति हमारी पृथ्वी के व्यास का झुकाव 23 डिग्री पर बनाने में सक्षम है। यही कारण है कि पृथ्वी पर ऋतुओं का निर्माण हुआ है।

पृथ्वी के जल भाग के भार तथा स्थल भाग के भार में संतुलन के कारण ही पृथ्वी निश्चित गति से अपने केन्द्र के चारों ओर घूमती है। पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति हमारे वातावरण में विभिन्न प्रकार के द्रव्यों का संतुलन बनाए रखने में भी सहायक होती है। इसी शक्ति के कारण बादलों में विद्युत् शक्ति का संचार होता है तथा इस विद्युत् शक्ति के कारण नाइट्रोजन तथा हाइड्रोजन में क्रिया स्थापित होती है तथा अमोनिया द्रव्य बनता है जो कि बादलों के जल के साथ पृथ्वी पर गिरता है। यह एक प्राकृतिक खाद का कार्य करता है और वनस्पतियों की पैदावार तथा उनके स्वास्थ्य में सहायक होता है। वायुमण्डल की Co_2 गैस कार्बोनिक अम्ल में परिवर्तित हो जाती है। क्रियाएँ इस प्रकार हैं :

$$2\,Co_2 + H_2o — 2HCo_3$$
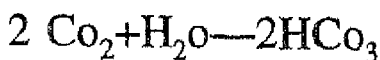
यह क्रिया तथा इस प्रकार की अनेक क्रियाएँ वायुमण्डलीय विद्युत् के कारण ही संभव होती हैं तथा हमारे वायुमण्डल में

विभिन्न द्रव्यों की मात्रा को नियन्त्रित करती हैं ।

इस प्रकार हमने यह जाना कि हमारी पृथ्वी किन-किन शक्तियों के अन्तर्गत अपनी परिक्रमा बनाए हुए है ।

पृथ्वी पर वनस्पति युग के साथ ही जीवन तत्त्वों का उत्पादन हुआ । अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीव तथा अन्य जीव उत्पन्न हुए तथा वनस्पति व सूक्ष्म जीवों में प्रगति की क्रिया उनके द्वारा उपजाई सन्तानों को धरोहर के रूप में मिलती रही । इस प्रकार धीरे-धीरे वनस्पतियाँ उन्नति कर विभिन्न प्रकार के फूलों, लताओं तथा वृक्षों में परिवर्तित हुईं । इस युग में पृथ्वी एक ही महाद्वीप के रूप में विकसित थी ।

पृथ्वी पर मानव जीवन

पृथ्वी पर आदि मानव की उत्पत्ति के विषय में अनेक कथन हैं। सर्वप्रथम वैज्ञानिकों द्वारा जीवाश्मों (Fossils) का अध्ययन कर मानव जाति की उत्पत्ति एवं काल का निर्णय लिया जाता था। फिर मानव की उत्पत्ति के विषय में कई वैज्ञानिक कथन प्रमाणित हुए। परन्तु आज इस विषय पर जीवाश्म कणों के अध्ययन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि मानव के समान दिखने वाले ये प्राणी अपने पूर्वजों से, जो कि वनमानुष जैसे दिखते थे, विकसित हुए। वनमानुष के ये अग्रज लगभग चार करोड़ वर्ष पूर्व भूमि पर उत्पन्न हुए और समय के साथ-साथ पृथ्वी के अनेक भागों में फैल गए। इन्हें विकसित होने में लगभग दो करोड़ वर्ष लगे। आदि मानव ने दो पैरों पर चलना आज से लगभग डेढ़ करोड़ वर्ष पूर्व सीखा और अन्य दो पैरों से हाथों का काम लेना शुरू किया। इनका पदार्पण यूरोप तथा एशिया में लगभग दो लाख वर्ष पूर्व हुआ। तब ये आज के मानव से बिल्कुल भिन्न थे। इनके सारे शरीर पर घने बाल थे। चेहरा देखें तो मात्र मुख, आँख तथा नाक ही दिखाई पड़ते थे। आज से लगभग एक लाख वर्ष पूर्व हमारे वास्तविक पूर्वज इसी जाति से विकसित हुए तथा इन्हें प्रस्तरयुगीन मानव कहा गया। ये लगभग चालीस हजार वर्ष पूर्व ही पूर्ण रूप से विकसित हुए
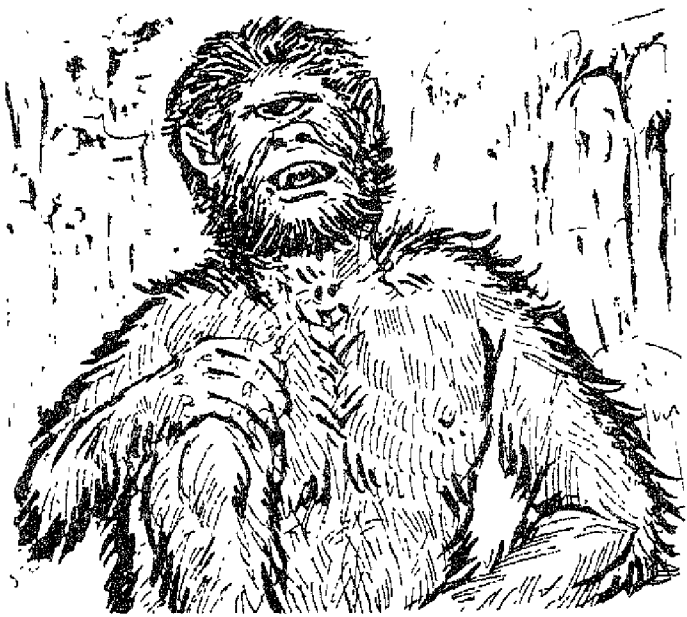
मानव रूपी इस वृक्ष की उत्पत्ति एक नारी तथा एक पुरुष के द्वारा ही प्रारम्भ हुई, जो धीरे-धीरे पृथ्वी के प्रत्येक भाग में फैल गए।

प्रस्तरयुगीन मानव कहलाने वाला यह मानव अपने भरण-पोषण के लिए जंगलों में रहता तथा फल-फूलों पर निर्वाह करता और वृक्षों के पत्ते तथा छाल का वस्त्रों के स्थान पर उपयोग करता। उसकी कोई भाषा, घर या नियत निवासस्थान नहीं था। लगभग 30 हजार वर्ष पूर्व उसने अपने चारों ओर की प्राकृतिक गति-विधियों की ओर ध्यान देना शुरू किया। तब उसने पाया कि कुछ समय के अन्तराल पर पुनः प्राकृतिक परिस्थितियाँ अपने कार्यक्रम को दोहराती हैं। इनके आधार पर उसने गर्मी, सर्दी, वसन्त इत्यादि ऋतुओं में होने वाले प्राकृतिक बदलाव को ध्यान में रख अपने भविष्य की भरण-पोषण की समस्याओं का समाधान

करना आरम्भ कर दिया । भोजन के लिए उसे फल-फूलों पर ही निर्भर रहना पड़ा ।

क्योंकि आदि मानव का जीवन पूर्णतः प्राकृतिक सम्पदा पर निर्भर था और उसके पास किसी भी खाद्यान्न को भण्डार करने की क्षमता नहीं थी, इसी कारण उसे भोजन की कमी का सामना करना पड़ता था ।

भूख ने उसे विवश कर दिया और उसका ध्यान वन्य जीवों की ओर आकर्षित हुआ । मांसाहार करने की प्रथम शिक्षा शायद उसने मांसाहारी वन्य जीवों से प्राप्त की ।

उसने देखा कि वन्य जीव अन्य जीवों का मांस खाकर अपना निर्वाह करते हैं । इसलिए उसका ध्यान भी वन्य जीवों की ओर केन्द्रित हुआ और इस प्रकार ऋतु-बदलाव के काल में होने

वन्य पदार्थों की कमी को उसने वन्य जीवों का मांसाहार
पूरा किया ।
नब से आदि मानव मांसाहारी बना उसकी मूलतः दो
ाओं का समाधान एक ही क्रिया द्वारा हुआ । एक समस्या
जन की, दूसरी समस्या थी वस्त्रों की । मांसाहारी होने के
त वह पत्तों व वृक्षों की छाल के स्थान पर जानवरों की
का प्रयोग अपने वस्त्रों के रूप में करने लगा । ये वस्त्र
क टिकाऊ एवं मजबूत थे ।
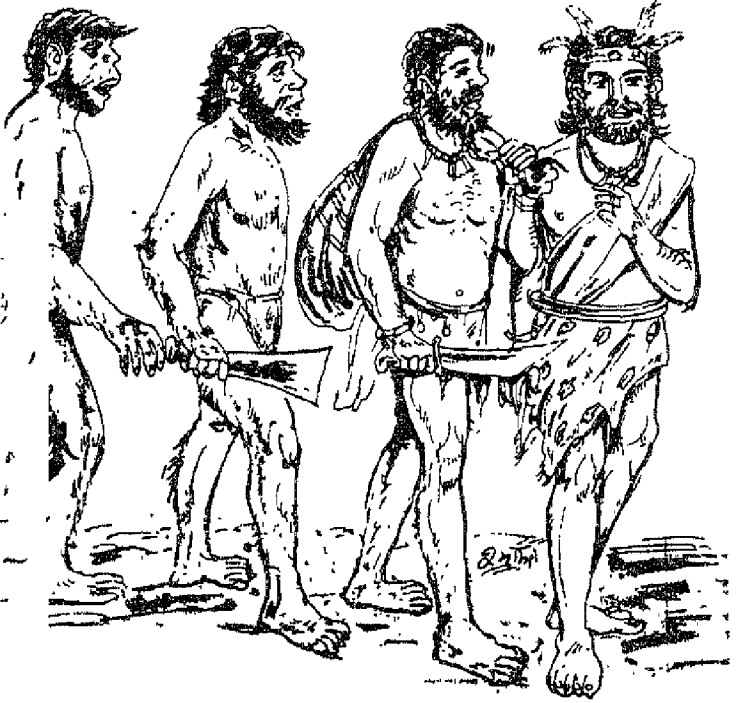
उसकी एक अन्य जरूरत थी अस्त्र-शस्त्रों की । किसी सीमा
इस समस्या का समाधान करने में ही उसका मांसाहारी होना
यक हुआ

मृत पशुओं की लम्बी एवं तीक्ष्ण, नुकीली हड्डियों को उसने हथियारों के रूप में अपनी सुरक्षा के लिए प्रयोग में लाना आरम्भ कर दिया । अब उसे मात्र वनस्पतियों पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि उसके पास भोजन प्राप्त करने का एक अतिरिक्त साधन भी उपलब्ध था ।

इस प्रकार इस काल से वह मांसाहारी तथा शाकाहारी दोनों ही प्रकार की भोजन सामग्री अपने निर्वाह के लिए प्रयोग करने लगा ।

मांसाहारी वृत्तियों के कारण उसका अधिकतर समय अब आखेट में गुजरने लगा । इसी कारण वन्य प्राणियों के वध हेतु वह दूर-दूर तक उनका शिकार के लिए पीछा करता ।

उसकी इस भाग-दौड़ के दौरान उसका ध्यान जानवरों की ओर आकर्षित हुआ । उसका स्वभाव वास्तव में उन्हीं जानवरों को मारने का बनता गया जो स्वभाव से हिंसक थे तथा जिनसे उसे हर पल आक्रमण होने का खतरा बना रहता था । जो जानवर उस पर आक्रमण नहीं करते या शान्ति एवं मैत्री-व्यवहार दर्शाते थे वह उन्हें नहीं मारता था । इसी शिकार की प्रक्रियाओं के काल में उसे अन्य वन्य जीवों का अध्ययन करने का भी अवसर मिला और कालान्तर में वह उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने लगा ।

समय के अन्तराल में उसने पशुपालन तथा खेती-बाड़ी जैसी विद्याएँ सीखीं, जो उसके जीवन में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव लाने में सक्षम हुईं । पशुपालन से उसने अपने यातायात व सुरक्षा तथा
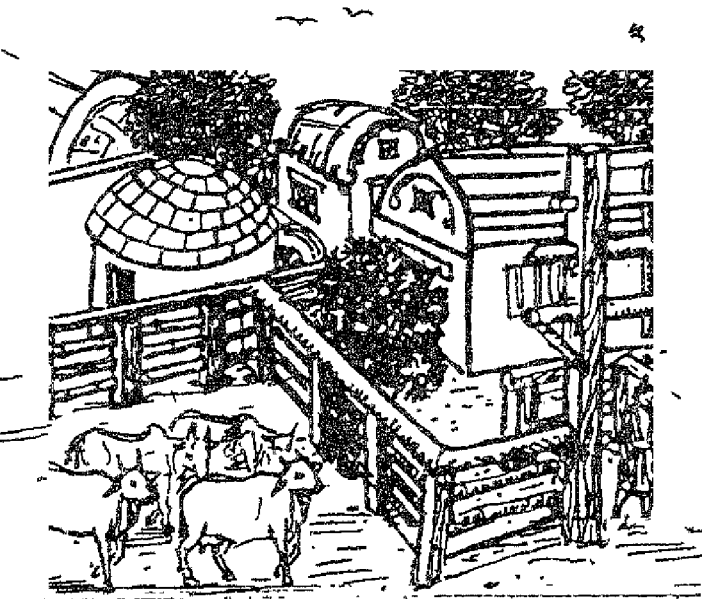
ी से अपने भोजन की पूर्ति की । अब उसे भोजन की
जंगलों में नहीं जाना पड़ता था । इस प्रकार उसके जीवन
क्ष्य पैदा हुआ, जिससे उसके जीवन को एक नई दिशा
ीरे-धीरे उसके अन्दर मानसिक विकास होता गया और
क स्थिर जीवन जीना आरम्भ कर दिया । तत्पश्चात
कास के सम्बन्ध में अधिक कुछ कहना वास्तव में उन
को पुनः दोहराना होगा, जो पहले कही गयी हैं ।
य के बदलाव के साथ-साथ उसने बहुत-सी विद्याएँ मात्र
घटनाचक्र से सीखीं । इन विद्याओं से उसमें शारीरिक
तथा बौद्धिक विकास हुआ । उसने भाषा को जन्म दिय
प्रकार उसके जीवन में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव आया
ल-जुलकर रहने लगे । अपनी कठिनाइयाँ व समस्याएँ

दूसरों से कह सकते तथा उनका समाधान सभी मिलकर करते। इस प्रकार मनुष्य छोटे-छोटे गाँव स्थापित कर अपना जीवन व्यतीत करने लगे। भाषा ने तिथिपत्र (कैलेण्डर) को जन्म दिया जो प्राकृतिक घटनाओं को जानने का एक महत्त्वपूर्ण तथा उपयुक्त माध्यम था।

पत्थरों को हथियार के रूप में प्रयोग करना तो उसकी दैनिक आवश्यकता थी। इसी दैनिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए वह अपने द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले पत्थरों को धारदार बनाता, नुकीला चोंचदार बनाता, जिनके प्रहार द्वारा वह जानवरों को घायल करता और उन्हें मारकर खाता। इन्हीं नित्य क्रियाओं के काल में उसके जीवन में एक अद्भुत एवं विचित्र घटना घटी। जब वह दो पत्थरों को रगड़ रहा था तो उससे चिंगारियाँ निकलीं जिससे पास पड़ी सूखी घास, पत्तों आदि में आग लग गई। इस घटना से वह घबरा गया, परन्तु इसी घटना ने उसके जीवनक्रम को एक नई दिशा दी।

दुर्घटनावश उसके हाथ से मांस का एक टुकड़ा जलती हुई आग में गिर गया। वह उसे उठाने में असमर्थ था, क्योंकि उसके सारे शरीर पर घने बाल थे। जलती आग में हाथ डालने का अर्थ था आत्मदाह। वह मात्र असहाय प्राणी की भाँति मांस के टुकड़े को जलते हुए देखता रहा और कुछ न कर सका।

आग बुझ गई तो उसने देखा कि मांस के टुकड़े को अधिक क्षति नहीं पहुँची थी। भूखा तो वह था ही। उठाया और खाने लगा। मगर यह क्या ? इस जले हुए टुकडे में कच्चे मांस के

टुकड़े से कहीं अधिक स्वाद था ।

इस घटना के उपरान्त वह जो भी शिकार करता, उसके मांस को आग में जलाकर खाता । वर्तमान काल में इस क्रिया को हम भूनना कहते हैं ।

इस प्रकार आग को प्रज्वलित करना उसके जीवन की वह विचित्र एवं आश्चर्यजनक घटना बनी, जिसने उसके रहन-सहन को एक नई दिशा दी । रातों को जंगली जानवरों से अपनी सुरक्षा के लिए वह आग जलाता, क्योंकि वह जान चुका था कि जंगली जानवर प्रायः आग से डरते हैं ।

वृक्षों की टहनियों, पत्तों एवं घास-फूस से उसने अपने लिए पृथ्वी पर ही वह सुरक्षा-व्यवस्था बनानी सीख ली जो वह पहले वृक्षों पर रहकर प्राप्त करता था ।

रात को रहने के लिए बाँस, पत्तों एवं घास-फूस से बनी कुटिया, बाहर सुरक्षा के लिए जलाई आग उसकी जंगली जानवरों से रक्षा करने में पूर्णतः सफल सिद्ध हुई ।

उसने रहने के लिए वृक्षों को छोड़ पृथ्वी पर ही अपना स्थायी निवास बनाया । साथ ही उसकी प्राकृतिक क्रियाओं के अध्ययन की रुचि ने उसे अपना जीवन सुचारु रूप से व्यतीत करने का अवसर दिया ।

इस प्रकार मानव ने उत्पादक का दर्जा प्राप्त किया । अब उसे भोजन की खोज में मारे-मारे नहीं फिरना पड़ता था । और यहीं से आरम्भ हुआ मानव का सामुदायिक तथा सामाजिक जीवन । परन्तु हिंसक तथा भीमकाय भयानक जंगली जानवरों का

भय उसे सदैव सुरक्षा के लिए प्रेरित करता रहता । इसी प्रेरणा से उसने पत्थरों तथा लकड़ी का उपयोग गृह-निर्माण में लाना आरम्भ किया । कालान्तर में मिट्टी को पकाकर ईंट बनाना तथा अपनी झोंपड़ियों में इन वस्तुओं का प्रयोग कर उन्हें मजबूत व सुरक्षित निवासस्थान के रूप में विकसित करना उसने सीख लिया ।

ग्राम्य जीवन में समस्याएँ विषम होती थीं और इन सबको समझदारी से हल करना भी उस समय कोई साधारण बात नहीं थी । इसलिए ग्राम के सभी लोग मिलकर अपने सरदार को नियुक्त करते । प्रत्येक ग्राम का सरदार उस ग्राम के राजा का दर्जा रखता । अपनी प्रजा की सुख-सुविधा व सुरक्षा के लिए अनेक उपाय करता । ग्राम विकसित हुए तो ग्रामों को मिलाकर

एक कस्बा बना दिया गया। जिस प्रकार ग्राम-प्रधान बनाया जाता उसी प्रकार कस्बे का प्रधान नियुक्त किया जाता जो अपने कस्बे की उन्नति, खुशहाली, सुरक्षा तथा सुविधा के लिए उत्तरदायी होता।

वास्तव में मानव जाति के प्रारम्भिक काल में प्रत्येक वस्तु प्रकृति ने बड़ी मात्रा में उपलब्ध करा दी थी। यदि फल-फूलों को लें तो पृथ्वी पर अनेक प्रकार के वृक्ष व लताएँ फल-फूलों से लदी रहतीं।

वन्य जीव भी बहुत अधिक मात्रा में थे। वैसे वन्य जीव तो मुख्यतः घास-फूस पर निर्भर थे, परन्तु मांसाहारी जीव अन्य जीवों का शिकार करते। इस प्रकार प्रकृति का उत्पत्ति व संहार का जीवन-चक्र निरन्तर चलता रहा।
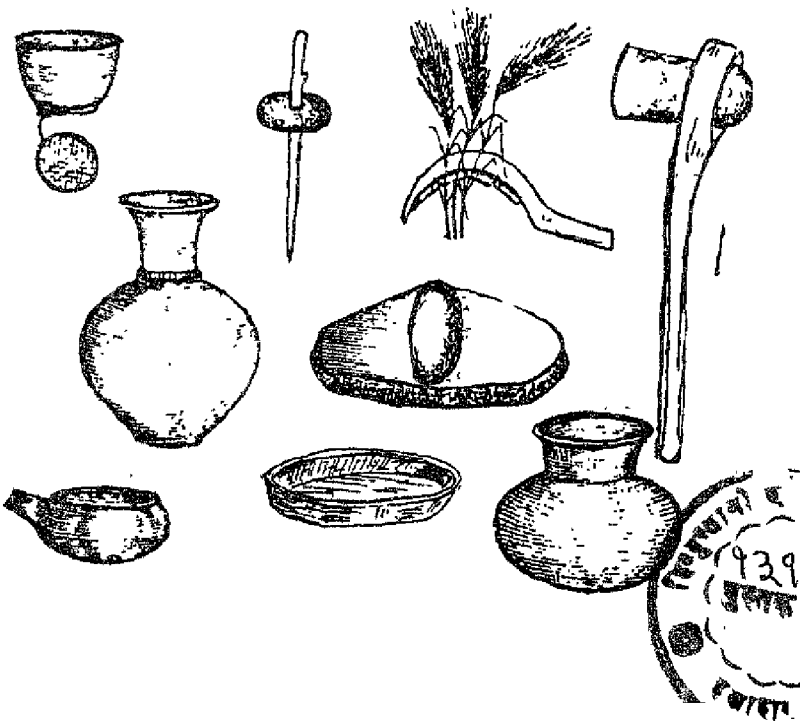
जैसे-जैसे मानव के शरीर व मस्तिष्क का विकास हुआ उसकी कार्य करने तथा परिस्थितियों का समाधान करने की क्षमता बढ़ी और इसी विकास को उसने अपने जीवन का सहज निर्वाह करने का माध्यम बनाया। अनेक प्रकार के उपकरण बनाए, जिन के माध्यम से वह अपने दैनिक कार्यों को आसान बना सका। खेती-बाड़ी के उपकरणों की यदि हम ऐतिहासिक जाँच करें तो हमें मालूम पड़ेगा कि ये उपकरण युगों से प्रयोग किए जा रहे है। वास्तव में समय-समय पर इन्हीं की मूल रचना में सुधार किया गया। खेती के लिए जल परम आवश्यक है और क्योंकि जल हर स्थान पर उपलब्ध नहीं था, इसी समस्या ने कुओं को खोदने की जरूरत पर बल दिया। जल भूमिगत था। उसे खेतों में प्रयोग करने के लिए अनेक प्रकार के उपकरणों की रचना व
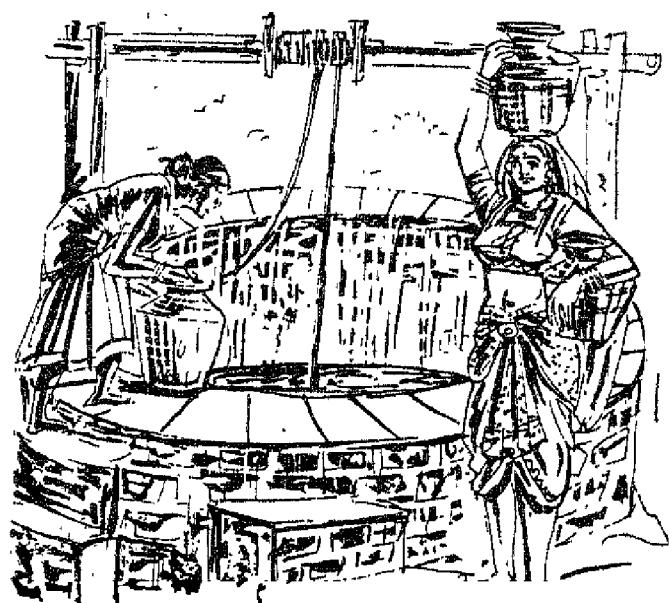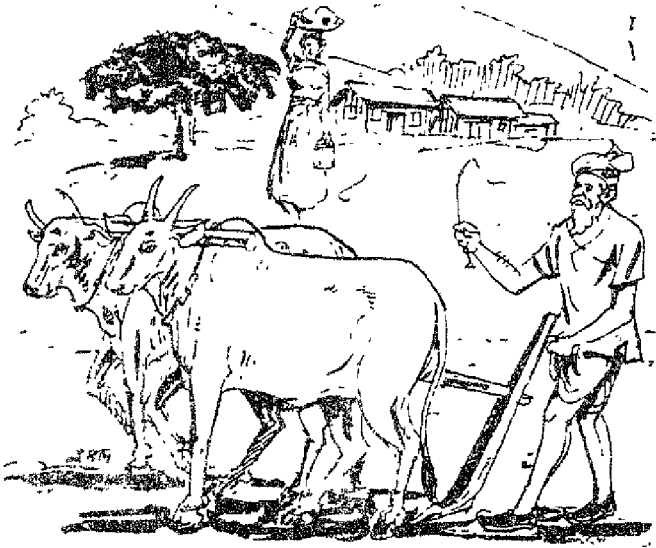
जन्म हुआ । जल को सींचने, खेतों को जोतने के लिए पालतू जानवरों की शक्ति को उपयोग में लाया गया । नहरें बनाई गई, तालाब बनाए गए । यह सब कार्य मानव के विकसित मस्तिष्क के कारण सम्भव हुआ । जैसे-जैसे समय-चक्र चलता गया एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को तथा दूसरी पीढ़ी तीसरी पीढ़ी को अपना उत्तराधिकार सौंपती रही । धीरे-धीरे मानव जाति की जनसंख्या मे वृद्धि होने लगी और इसी जनसंख्या-वृद्धि के कारण वन्य जीवों की संख्या में आंशिक रूप से कमी होना आरम्भ हुआ । मानव जाति की जनसंख्या ने अधिक ग्रामों, कस्बों और शहरों को जन्म दिया । जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ी वैसे-वैसे प्राकृतिक संसाधनों (जल पृथ्वी कृषि इत्यादि) पर भार बढा परन्तु यह प्रारम्भिक

स्थिति थी इसलिए प्राकृतिक सन्तुलन सम्पूर्ण रूप से बना रहा। मानव जाति का विकास तथा ग्रामों और शहरों के फैलाव ने राज्यों को जन्म दिया, राजाओं को जन्म दिया। प्रजा तो अजन्मा थी ही, क्योंकि इन सबके जन्म का श्रेय प्रजा को ही जाता है। प्रजा होगी तो ग्राम होंगे, कस्बे होंगे, शहर तथा राज्य होंगे और राजा होंगे।
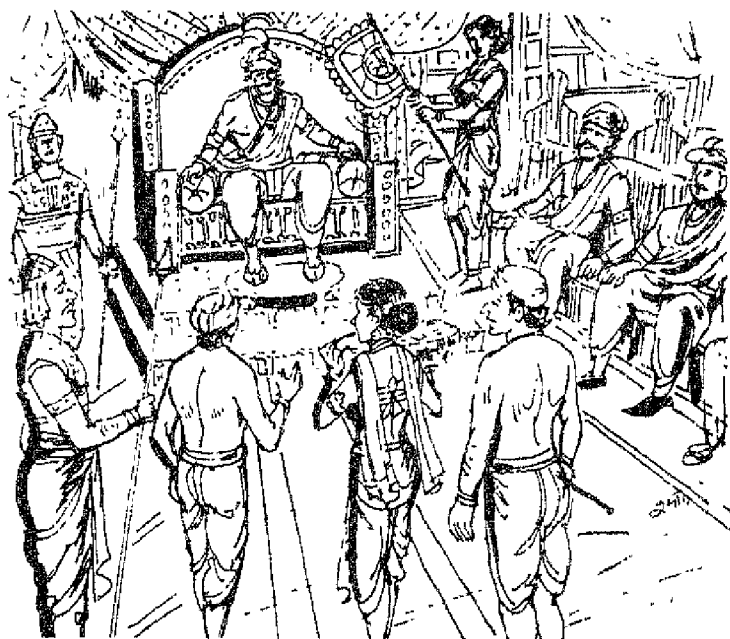
प्रजा की सुख-सुविधा, भरण-पोषण इत्यादि का उत्तरदायित्व अब परिवार के मुखिया के साथ-साथ राज्य के राजा का भी बन गया। उन्होंने प्रजा को रोजगार एवं रोटी, कपड़ा जैसी मूल आवश्यकताओं को उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक काल मे विभिन्न उद्योगों की स्थापना की।

खेती-बाड़ी एक विशेष उद्योग रहा और अधिकतर प्रजा इसी

उद्योग में कार्यरत रही । आपस में मिल-जुलकर रहना तथा एक-दूसरे की सहायता करना उसने इसी कार्यकाल में सीखा । अपने साथियों के दुःख में उन्हें सान्त्वना देना तथा सुख में मिलकर सुख बाँटना, यह भी सीखा और यही शिक्षाएँ आगे चलकर उनके सामाजिक जीवन की आधारशिला बनीं ।

प्रत्येक राजा ने अपने राज्यकाल में वस्तुतः परिस्थिति अनुसार अनेक नियम स्थापित किए । इन नियमों का मुख्य उद्देश्य प्रजा में प्रकृति व मानव जाति के प्रति जागरूकता प्रदान करना ही था । साथ ही इन नियमों के पालन से राज-कार्य सफलतापूर्वक चलता रहता तथा प्रजा एक-दूसरे की सुख-सुविधा के लिए योगदान करती । कुछ प्रजावासी राजा की सहायता हेतु उसके सहायक चुने जाते, जिन्हें राजा द्वारा स्थापित नियमों के पालन का भार सौंपा जाता ।

इन्हीं आदान-प्रदान एवं मिल-बाँटने की क्रियाओं के कार्यकाल में ही कई भाषाओं का जन्म हुआ । कुछ कहना, कुछ सुनना, कुछ मानना, कुछ मनवाना जैसी बातें भाषा के जन्म की प्रथम सीढ़ी सिद्ध हुईं । विचारों के आदान-प्रदान में बहुत आसानी हुई । परन्तु इस काल में भाषा मात्र मौखिक शैली में ही बनी रही ।

जब मानव की अपने विचार व्यक्त करने की शक्ति अधिक बलवान हुई तो उसने चित्रों एवं आकृतियों के माध्यम से अपने विचारों को प्रकट करना आरम्भ कर दिया । परन्तु यह माध्यम बहुत विकसित न हो सका; क्योंकि कालचक्र की गति वैसे तो

बहुत तीव्र है, परन्तु दूसरी ओर यदि देखें तो यह गति बहुत धीमी भी है ।

काल की धीमी गति से अर्थ है भाषा का विकास, जो अति मध्यम गति से हुआ । इसी कारण चित्रों एवं संकेतों की भाषा को विकसित होने में बहुत अधिक समय लग गया ।

कालगति तीव्र है, इस संदर्भ में यह कहना अनुचित न होगा कि इससे पहले कि चित्रों व आकृतियों की भाषा का विकास होता, उसे जन्म देने वाली सभ्यता काल का ग्रास बन गई ।

इस प्रकार प्रत्येक काल में भिन्न-भिन्न चित्रों एवं संकेतों द्वारा तत्कालीन विचारों को व्यक्त करने का माध्यम बनाया गया जो कि एक विशेष सभ्यता के जीवन काल में ही प्रयोगात्मक रहा । उसका विकास उत्तराधिकार से नहीं हो सका ।

हमारी भाषा के जन्म के साथ ही मानव जाति के जीवनयापन में एक अभूतपूर्व योगदान हुआ । वैसे हमारी भाषा को वर्तमान रूप में पहुँचने के लिए भी कई युगों की यात्रा करनी पड़ी । कई सुधार व योगदान हुए । भाषा सर्वप्रथम शिलाओं पर अंकित की जाती, क्योंकि लिखने के लिए कागज व स्याही नहीं जन्मे थे । समय के अन्तराल में वृक्ष के पत्तों को कागज के स्थान पर उपयोग में लाया गया । वास्तव में प्रत्येक धार्मिक पुस्तक, ग्रंथ या पुरातन कथा की पांडुलिपि वृक्ष के पत्तों पर ही जन्मी तथा हस्तलिखित रूप में सुरक्षित रही ।

आदि काल में हमारे ऋषि-मुनियों ने अपने द्वारा स्थापित नियमों शिक्षाओं एवं ग्रंथों की रचना के लिए तथा उनके संकलन

के लिए अनेक वृक्षों के पत्तों का चयन किया तथा अपनी अमूल्य निधि उन पत्तों पर अंकित कर धरोहर के रूप में अपने उत्तराधिकारियों को सौंप दी, जिसे प्रत्येक उत्तराधिकारी ने अपने अग्रज द्वारा स्थापित निधि में समय-समय पर योगदान कर आने वाले उत्तराधिकारी को दे दी। इस प्रकार पीढ़ियों से चली आ रही हमारी यह संहिता धीरे-धीरे बढ़ती रही और उसने ग्रंथों का रूप धारण कर लिया।

कई अन्य स्थानों पर पत्थरों की शिलाओं को लेखन-सामग्री के रूप में प्रयोग किया गया, क्योंकि यह माध्यम विचारों के प्रसार का स्थायी तथा सुरक्षित माध्यम था। इस काल में उसने अपनी शिक्षाओं एवं नियमों को शिलाओं पर अंकित कर दिया ताकि वह इनके माध्यम से अधिक से अधिक लोगों तक अपनी शिक्षाओं एवं विचारों को पहुँचाकर उन्हें तत्कालीन गतिविधियों का परिचय दे सके तथा लाभान्वित कर सके। वर्तमान युग में कागज के जन्म के साथ कई लेखन-सामग्रियों की रचना भी हुई।

इसी प्रकार जीवन-यात्रा तय करते-करते करोड़ों वर्षों के अन्तराल में, कई राज्य कालों से गुजरते, कई आक्रमण एक-दूसरे पर करते या सहते, कई ऋषि-मुनियों की अमूल्य निधियाँ सँजोए, पूर्वजों की उपलब्धियों को लिए मानव ने वर्तमान जीवन युग मे कदम रखा, परन्तु जिसे हम वर्तमान युग कहते हैं उस युग का आरम्भ भी आज से हजारों वर्ष पूर्व हुआ था। यदि हम अपने वर्तमान युग के प्रारम्भिक काल की ओर ध्यान करें तो हमें मालूम

; पृथ्वी के सम्पूर्ण भूखण्डों की जनसंख्या भी नाममात्र ही
र्थात् उस काल में भी मानव पूर्ण रूप से प्राकृतिक
ों पर निर्भर था। वह कृषि-प्रधान था तथा अपनी जीवन-
ओं के प्रति जागरूक भी था। अनेक प्रकार के उपकरणों
ाता था तथा उपभोक्ता भी स्वयं ही था। इस युग को
का नाम दिया गया। और हम सब संसार के प्रारम्भिक
से आंशिक रूप से परिचित भी हैं।

ी काल में मानव का ध्यान भूमि के गर्भ में छिपे भण्डारों
र आकर्षित हुआ। खनिज पदार्थों को अशुद्ध एवं मिश्रित
पृथ्वी के गर्भ से निकालना तथा उन्हें शुद्ध रूप से धातु
परिवर्तित करना उसके लिए एक आवश्यकता बन गई;
इन्हीं धातुओं के बल पर वह अनेक प्रकार के औजार एवं
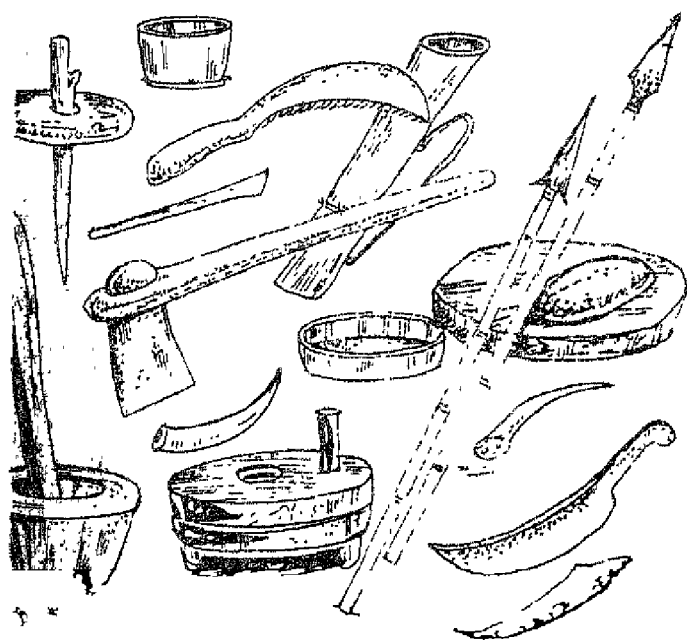
उपकरण बना सकता था। भिन्न प्रकार के बर्तन, खेती-बाड़ी के उपकरण तथा सुरक्षा के लिए ढाल, तलवार इत्यादि भी इसी काल में जन्मे और इसी काल में जन्मी भूमि की खनन प्रक्रिया, जिसके द्वारा मिला विभिन्न धातुओं का एक विशाल भण्डार, जिसे मनुष्य ने अपनी विभिन्न जरूरतों के लिए प्रयोग किया।

इन्हीं शिक्षाओं, आदेशों, उपदेशों तथा जीवन-मूल्यों के लिए अनिवार्य विधियों को लिए वह एक पीढ़ी से दूसरी तथा दूसरी से तीसरी पीढ़ी की ओर गतिशील होता रहा। प्रत्येक कर्मी अपने द्वारा अर्जित विद्या को अपने उत्तराधिकारियों को सौंपना एक गर्व की बात समझता था और यही प्रथा भी थी, जिसने समकालीन ज्ञान-विज्ञान को उन्नति तथा बल प्रदान किया।

इन्हीं इतिहास के पृष्ठों में रामराज्य, महाभारत काल, कृष्ण काल तथा अनेक ऋषि-मुनि, उच्चकोटि के विचारक अंकित है। इन्हीं के मध्य हैं हमारे वर्तमान युग के बुद्ध, महावीर स्वामी, गुरु नानक देव, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, भर्तृहरि, स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा अन्य अनेक महापुरुष, जिन्होंने हमारा समय-समय पर मार्गदर्शन किया तथा अनेक युक्तिसंगत नियम स्थापित किए, जिनके पालन से जीवन सुखी तथा समृद्धिमय हो। यह महापुरुष किसी राज्य, देश या प्रदेश के राजा नहीं थे, बल्कि जनसाधारण से ही सम्बन्धित थे, जिन्होंने जनसाधारण के जीवन-स्तर को सुधारने के लिए इस पृथ्वी पर जन्म लिया और हमारे जीवन का मार्गदर्शन किया।

समय निरन्तर गतिमान रहा और समय के साथ-साथ जैसे

वृक्ष पर फल लगते हैं, लताएँ फूलों से ढक जाती हैं, वैसे ही मानव जाति भी अपने अग्रजों से ढकती व बढ़ती रही । एक समय था कि पृथ्वी पर पृथ्वी क्षेत्र के अनुपात में मानव जाति सम्पूर्ण रूप से एक अंश ही थी । परन्तु समय के साथ-साथ एक अभूतपूर्व बदलाव आया और परिस्थितियाँ बिल्कुल विपरीत हो गई । प्रारम्भ में यदि हम पृथ्वी तथा मानव का अनुपात निकाले तो प्रत्येक मानव के लिए सैकड़ों हैक्टेयर भूमि थी, परन्तु आज यदि देखा जाए तो यह अनुपात बिल्कुल विपरीत दिशा में जा रहा है । मानव जाति की जनसंख्या इतनी अधिक बढ़ गई है कि हमें उत्पादन के अतिरिक्त साधनों के बारे में सोचने पर मजबूर होना पड़ गया है; क्योंकि इतनी बड़ी जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए भोजन आवश्यक है । उनके रहने के लिए मकान तथा व्यवसाय के लिए फैक्टरियों, कारखानों और मशीनों की आवश्यकता है । फैक्टरियों तथा कारखानों को गतिमान करने के लिए कच्चे माल, बिजली और कोयले की आवश्यकता है । फैक्टरी, मकान तथा कारखाने बनाने के लिए मुख्यतः ईंट, सीमेंट, लोहा और लकड़ी की बड़े पैमाने पर आवश्यकता पड़ती है । लोहे, कोयले तथा ईंट के लिए हम पूर्ण रूप से पृथ्वी पर निर्भर हैं और अनुमान से भी अधिक बढ़ती जनसंख्या के लिए हमारे विशाल भू-भाग को खानों में परिवर्तित किया जा चुका है । खानों से कच्ची धातु को फैक्टरियों व कारखानों में पहुँचाने के लिए हमें यातायात के साधनों पर निर्भर रहना होता है । इसके लिए रेल पटरियों, रेल डिब्बों तथा सडकों ट्रकों इत्यादि की भी बडी मात्रा में

होती है । सड़कें बनाने के लिए पत्थर की आवश्यकता भी पृथ्वी द्वारा पूरी होती है । वाहनों को चलाने के लिए डीज़ल तथा पैट्रोल भी भूमि के गर्भ से ही प्राप्त होता है । निर्माण-कार्यों में काम आने वाली अनेक धातुएँ भी हमें भूमि द्वारा ही मिलती हैं । इस प्रकार हम देखते हैं कि अपनी व्यावसायिक, व्यक्तिगत तथा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हम अपने पूर्वज आदि मानव की भाँति ही पूर्ण रूप से धरती पर ही निर्भर हैं । बदलाव आया तो मात्र इतना कि हम अपने पूर्वजों की अपेक्षा अत्यधिक उन्नत है, प्रगतिशील हैं तथा विकसित हैं । परन्तु हम इस तथ्य को कभी झुठला नहीं सकते कि इतनी प्रगति व उन्नति प्राप्त करने के बावजूद हम पृथ्वी पर ही निर्भर हैं । अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हम इसे बुरी तरह से खोखला कर रहे हैं । अर्थात् इसकी ऊपरी उपजाऊ तथा खनिजयुक्त परत का अत्यधिक ह्रास कर रहे हैं । पृथ्वी पर इन विशालकाय गतिविधियों के कारण हमारे ऋतु-चक्र पर भी प्रभाव पड़ा है और पृथ्वी को सूर्य की हानिकारक किरणों से बचाने वाली ओज़ोन गैस की परत भी क्षतिग्रस्त हुई है ।

ओज़ोन हमारे वायुमण्डल को सूर्य की हानिकारक तीव्रगामी बैंगनी किरणों से बचाने के लिए एक छतरी का काम करती है । ये किरणें सूर्य की किरणों का एक हिस्सा हैं तथा बहुत अधिक तापमान पैदा करने में सक्षम हैं । इनके इसी अवगुण के कारण यह हमारी पृथ्वी के लिए हानिकारक सिद्ध होती हैं और इन्हीं हानिकारक किरणों को रोकने में ओजोन की परत जो हमारे वायुमण्डल की

सबसे ऊपरी तह बनाती है, पूर्ण रूप से सक्षम है।

यही कारण है कि हमारी पृथ्वी पर यह ओज़ोन परत एक छतरी की तरह काम करती है तथा अधिक ऊर्जा पैदा करने वाली किरणों को पृथ्वी पर नहीं पहुँचने देती।

एक बात तो तय है कि यदि हमारी ओज़ोन परत क्षतिग्रस्त होगी तो इसके परिणाम भयंकर होंगे। कितने भयंकर होंगे यह जानने के लिए मात्र एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा।

हमारी पृथ्वी पर तीन-चौथाई भाग पानी है तथा एक-चौथाई भाग स्थल है, जिस पर अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ, जीव-जन्तु, पशु-पक्षी एवं मानव रह रहे हैं। साथ ही जल भाग में भी विविध प्रकार की जलचर जीव-जातियाँ निर्वाह करती हैं। सूर्य हमारा एकमात्र शक्ति का स्रोत है।

यदि हम ध्यान से देखें तो पृथ्वी पर अनेक वनस्पतियाँ जंगलों में विकसित हैं, जो सूर्य की रोशनी के कारण जीवित है तथा पानी के कारण उन्नतशील हैं। ओज़ोन परत न रहे उस स्थिति पर भी आइए विचार करें। ओज़ोन परत की अनुपस्थिति में भूमि पर आने वाली सूर्य किरणों का तापमान बहुत अधिक बढ़ जाने की सम्भावना हो जाएगी, जिसके फलस्वरूप हमारी पृथ्वी पर जमे हिमखण्डों, पहाड़ों एवं ध्रुवों पर जमी बर्फ के पिघलने की आशंका उत्पन्न हो जाएगी। दूसरी ओर वायुमण्डल का तापमान बहुत अधिक बढ़ने के कारण सभी प्रकार की वनस्पतियाँ प्रभावित होंगी एवं नष्ट हो जाएँगी। पहाड़ों, हिमखण्डों तथा ध्रुवों पर से पिघली हुई बर्फ के जल के बहने के कारण अनेक

स्थानो पर असमय बाढ आने की सम्भावना उत्पन्न हो जायेगी साथ ही नदियां द्वारा अतिरिक्त जल समुद्रों में छोड़ने के कारण समुद्र के जलस्तर में वृद्धि होगी जिससे समुद्र-तट पर बसे शहरों एवं प्रदेशों में बाढ़ की आशंका उत्पन्न हो जायेगी । यह भी सभावना है कि समुद्र-तट पर बसे क्षेत्र सदैव के लिए जलमग्न हो जाएँ ।

सूर्य की किरणों की तीक्ष्णता सागरों तथा सभी जलस्रोतों के जल का तापमान बढ़ा देगी, जिससे हमारी सागर-सम्पदा, जलचर इत्यादि प्रभावित होंगे तथा उनके विनाश और लुप्त होने की भी संभावना हो जाएगी ।

आप सोच सकते हैं कि फिर मानव जाति का क्या होगा जो कि अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्ण रूप से पृथ्वी पर ही निर्भर है । सम्पूर्ण वातावरण वाष्प की अधिकता से प्रभावित होगा । अत्यधिक वाष्पीकरण अधिक बादलों को तथा अधिक बादल अधिक वर्षा को जन्म देंगे तथा अधिक वर्षा के कारण समुद्र-तट से दूर रहने वाले लोग भी प्रभावित होंगे । बाढ़ आना एक नित्य क्रिया बन जाएगी और फिर शीघ्र ही सम्पूर्ण धरती एक बार फिर जलमग्न हो जाएगी ।

ऋतुओं में बदलाव से सूखा पड़ने की प्रक्रिया अब लगभग एक नित्य बात हो गई है । इससे कृषि की गतिविधियों में रुकावट आई है और आए दिन फसलें नष्ट हो जाती हैं । पानी की कमी की पूर्ति के लिए विशालकाय जल-स्रोत बनाए गए हैं जहाँ जल एकत्र कर आवश्यकता के समय खेती की जलपूर्ति की जाती है

तथा इसके साथ ही जल से पन बिजली प्राप्त करना एक लाभकारी गतिविधि सिद्ध हुई है ।

अत्यधिक प्रदूषण के कारण हमारा वायुमण्डल प्रभावित हुआ है । निरन्तर धुएँ तथा गैसों का फैक्टरी, कारखानों तथा वाहनों द्वारा वायुमण्डल में छोड़ा जाना घातक सिद्ध हो रहा है । वनस्पति जगत् में वायुमण्डल का सन्तुलन बनाए रखने की क्षमता क्षीण पड़ रही है, क्योंकि लकड़ी तथा लकड़ी के कोयले को प्राप्त करने के लिए तथा खानें खोदकर खनिज प्राप्त करने के लिए बड़ी मात्रा में जंगलों को अनजाने में हमने नष्ट कर दिया है । यही कारण है कि जो वनस्पतियाँ व जंगल बचे हैं उन पर वायुमण्डल की विषैली गैसों के प्रभाव को नष्ट करने का अत्यधिक बोझ पड़ा है । इसी कारण विषैली गैसें हमारे वायुमण्डल में निरन्तर बढ़ रही हैं, हमारे वन्य-जीवों, वनस्पतियों तथा मानव

जीवन को प्रभावित कर रही हैं जिनके फलस्वरूप अनेक विचित्र रोग उत्पन्न हो रहे हैं। वातावरण में अत्यधिक प्रदूषण के कारण हमारे वातावरण की रक्षा करने वाली ओज़ोन परत में भी विकार उत्पन्न हुआ है और कई स्थानों पर उसमें छेद हो गए हैं। इन छेदों से पार होकर आने वाला सूर्य का प्रकाश वनस्पतियों, जीवों तथा वातावरण के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहा है। इसी कारण पृथ्वी की सतह का तापमान बढ़ने लगा है तथा इसके दुष्परिणाम जन्म ले चुके हैं। वैज्ञानिकों ने भविष्यवाणी की है कि यदि ओज़ोन परत की सुरक्षा न की गई और विषैली गैसों का वायुमण्डल में प्रवेश न रोका गया तो निकट भविष्य में पृथ्वी के उत्तरी व दक्षिणी ध्रुवों पर तथा पर्वतमालाओं पर जमी बर्फ पिघल जाएगी, जिसके कारण अत्यधिक पानी सागरों में प्रवेश करेगा, नदियों में असमय बाढ़ आएगी तथा समुद्र का जलस्तर बढ़ने के कारण संसार के सभी बन्दरगाह डूब सकते हैं। भूमि का तापमान जिस गति से बढ़ रहा है एक समय ऐसा भी आएगा जब वन्य-सम्पदा एवं वनस्पतियों का इस पृथ्वी पर अंकुरित होना भी असंभव हो जाएगा। बात कहने में इतनी विकट नहीं लगती, परन्तु समस्या की गम्भीरता अत्यधिक है। इस बात को ध्यान में रखते हुए अनेक देशों की सरकारों ने इसके समाधान हेतु अनेक नियम घोषित किए हैं जिनका पालन अति कठोरता से किया जा रहा है। वातावरण एवं वायुमण्डल के प्रदूषण पर अंकुश लगाना इसलिए भी आवश्यक हुआ है क्योंकि प्रदूषित वायु में श्वास लेना मानव जाति के लिए हानिकारक है तथा इससे कई

असाध्य एवं विकट रोग उत्पन्न हुए हैं जिनके प्रकोप से बच्चे तक प्रभावित हो रहे हैं ।

पृथ्वी पर बड़े पैमाने पर निर्माण, खनन तथा उत्पादन इकाइयों के लगाए जाने के कारण इसके भू-भाग तथा जल भाग में संतुलन प्रभावित हुआ है । यदि ये क्रियाएँ और अधिक समय तक चलती रहीं तो सम्भवतः पृथ्वी का अपने व्यास पर झुकाव आंशिक रूप से प्रभावित हो जाएगा, ऐसी स्थिति में इसका सीधा प्रभाव हमारे ऋतु चक्र पर पड़ेगा । इससे पृथ्वी का सूर्य-परिक्रमा का समय भी प्रभावित हो सकता है । इस प्रकार जनसंख्या-वृद्धि का प्रभाव प्रत्येक क्षेत्र में होने वाली गतिविधियों से सम्बन्धित होने के कारण हमारे जीवन-चक्र को प्रभावित करेगा । पृथ्वी की गति प्रभावित होने के कारण हमारे उपग्रह

'चन्द्रमा' का प्रभाव पृथ्वी को आकर्षित कर लेगा जिस कारण समुद्र तथा महासागरों में अत्यधिक ऊँचाई की लहरें उठने की सम्भावना को नकारा नहीं जा सकता । इन लहरों की उत्पत्ति ही हमारे सामान्य जीवन-चक्र को अस्तव्यस्त करने के लिए पर्याप्त होगी । यदि पृथ्वी के भार सन्तुलन में बदलाव आया तो इससे सूर्य के गिर्द पृथ्वी का परिक्रमा मार्ग प्रभावित होगा । इसके दो परिणाम सम्भव हैं । प्रथम, यदि परिक्रमा मार्ग घट गया तो हमारे दूरसंचार माध्यम, तापमान, गुरुत्वाकर्षण शक्ति तथा पृथ्वी को प्रभावित करने वाली सभी शक्तियों में बदलाव आएगा । सूर्य से आने वाली प्रकाश किरणें अधिक तीक्ष्ण तथा तप्त होंगी जिससे सभी प्रकार का वन्य जीवन, वनस्पति जीवन, जलचर जीवन तथा मानव जीवन प्रभावित होगा और ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होंगी
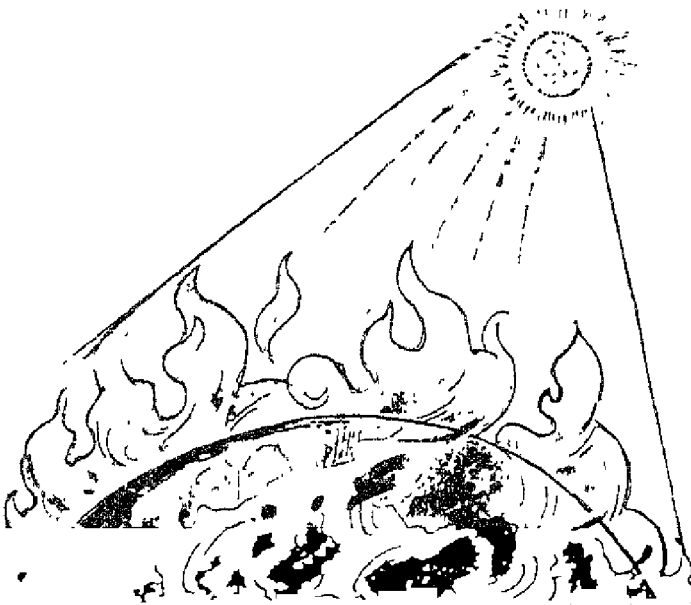
कि पृथ्वी हमारे जीवनयापन के योग्य न रहकर एक बार पुनः मृत ग्रह-सा बन सकती है ।

दूसरी ओर यदि पृथ्वी का परिक्रमा मार्ग अधिक हो गया तो इसके परिणाम बिल्कुल भिन्न होंगे । पृथ्वी पर आने वाली प्रकाश किरणों का तापमान गिर जाएगा तथा इस कारण पृथ्वी पर अत्यधिक ठंड हो जाएगी और पुनः हिम युग का पदार्पण होगा ।

यह तो हम भलीभाँति जानते हैं कि सर्वप्रथम जब हमारे सौरमण्डल का निर्माण हुआ उस काल में सभी ग्रहों का सूर्य के गिर्द परिक्रमा मार्ग अनियमित-सा था । इसका विशेष कारण था सूर्य द्वारा इन ग्रहों पर उसकी आकर्षण शक्ति का प्रभाव । परन्तु जैसे-जैसे सूर्य की आकर्षण शक्ति इन ग्रहों पर नियन्त्रित होती गई वैसे-वैसे सभी ग्रहों का परिक्रमा मार्ग निश्चित होता गया और इस प्रकार करोड़ों वर्षों के अन्तराल में सभी नौ ग्रह अपने-अपने परिक्रमा पथ पर स्थिर रूप से गतिमान हो गए ।

इस काल में पृथ्वी की सूर्य से दूरी अधिक थी और इसी कारण पृथ्वी पर हिम युग का पदार्पण हुआ था । परन्तु जैसे-जैसे पृथ्वी का परिक्रमा मार्ग निश्चित होता गया वैसे-वैसे वह सूर्य के प्रति आकर्षित हुई । इस कारण इसके परिक्रमा मार्ग में कमी आई और परिक्रमा का घेरा छोटा हो गया । इसी कारण पृथ्वी पर सर्वत्र जमी बर्फ सूर्य की तप्त किरणें पड़ने के कारण पिघल गई और पृथ्वी पर जल-स्रोत, जलाशय, नदियाँ, सागर और महासागरों का निर्माण हो गया । शीत युग में तो सम्पूर्ण पृथ्वी मात्र बर्फ से ढकी थी । परन्तु बर्फ का पिघलना जल का निम्न स्थानों की ओर बहना और वहाँ

एकत्रित होना यह सब क्रियाएँ पृथ्वी का परिक्रमा मार्ग निश्चित होने के बाद ही घटीं। हमारी पृथ्वी के गहरे या यूँ कहें कि निचले भागों ने सागरों एवं महासागरों को जन्म दिया। जल ऊँचे स्थानों से बह निकला और उस जलप्रवाह द्वारा बनाए गए मार्ग ने नदियों को जन्म दिया। नदियों के मार्ग में जो स्थान गहराई पर रहे उन्हीं स्थानों पर जलाशय, तालाब इत्यादि जन्मे।

इसलिए इस बात की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग सावधानीपूर्वक किया जाए तथा ऐसे उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाए जो वातावरण-निर्माण में सहयोगी हों। ऊर्जा के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग अन्य ऊर्जा स्रोतों के उपयोग से कहीं अधिक लाभकारी है, क्योंकि कोयला और पैट्रोल अधिक मात्रा में नहीं बचे हैं। जो पैट्रोल व कोयला हम आज उपयोग में ला रहे हैं उसके निर्माण में करोड़ो वर्ष लगे हैं। साथ ही इन सब स्रोतों के भण्डार की एक सीमा है और इन भण्डारों में अब अधिक पदार्थ नहीं रह गए हैं। अत. नए प्राकृतिक ऊर्जा स्रोतों पर आधारित उद्योगों की स्थापना आज एक मूल आवश्यकता बन गई है।

एक अन्य विश्लेषण के अनुसार हमारी पृथ्वी की उत्पत्ति गैसों के विशालकाय पिण्ड के रूप में हुई, जो अपनी धुरी पर सूर्य के गिर्द परिक्रमा करने लगा, क्योंकि पृथ्वी तथा अन्य आठ ग्रहों का जन्मदाता सूर्य को ही माना गया है।

जिस प्रकार एक बालक अपने पिता द्वारा नियत किए गए मार्ग पर चलता है ठीक उसी प्रकार हमारे सौरमण्डल के ग्रह तथा

हमारी पृथ्वी सूर्य के गिर्द परिक्रमा कर रहे हैं । आंशिक रूप से न्यूनाधिक सूर्य के गुण हर ग्रह में विकसित हैं । ताप के विकिरण के कारण समय के अन्तराल में जैसे-जैसे यह पिण्ड ठंडा होता गया, इसके अन्दर गैसों का शीतल होना आरम्भ हुआ और कालान्तर में यही तरल तथा अर्ध ठोस अवस्थाओं को प्राप्त होकर वर्तमान अवस्था में पहुँचा ।

पृथ्वी का ठोस रूप में परिवर्तित होना ऊपरी भागों से ही आरम्भ हुआ, क्योंकि ऊपरी भाग पूर्ण रूप से इस वातावरण के सम्पर्क में था, अतः धीरे-धीरे पृथ्वी की ऊपरी सतह की मोटाई केन्द्र की ओर बढ़ने लगी । इसकी ऊपरी परत की मोटाई बढ़ने तथा भीतरी भाग गर्म होने के कारण ऊपरी परत पर झुर्रियाँ पड़ने लगीं, सतह सिकुड़ने लगी और समतल न रहकर कहीं बहुत अधिक ऊपर उठ गई और कहीं नीचे धँस गई । ऊँचे भागों को पर्वतों की संज्ञा दी गई और नीचे के भागों को धरातल की संज्ञा दी गई । प्रारम्भ में पर्वत शृंखलाओं की ऊँचाई कहीं अधिक रही होगी तथा धरातल अधिक नीचे रहा होगा, परन्तु युगान्तर में पर्यावरणीय शक्तियों द्वारा पर्वतों की ऊँचाई जिधर एक ओर कम हुई, वहीं दूसरी ओर धरातल की ऊँचाई में वृद्धि हुई । यह प्रक्रिया निरन्तर चल रही है और इस प्रक्रिया की गति अति मध्यम है । इसी कारण परिणाम दृष्टिगोचर होने में कई-कई शताब्दियाँ लग जाती है । उदाहरण के लिए यदि हम देखें तो इतिहास साक्षी है कि हमारे भू-भाग में सिन्धु घाटी की सभ्यता कभी बसी थी । महाभारत का युद्ध कुरुक्षेत्र में हुआ था और भी कई महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक

घटनाएँ हुईं, जिनकी जानकारी हमारे पुरातत्त्व वैज्ञानिक समय-समय पर हमें देते हैं।

कई स्थानों पर खुदाई करने पर पुरातन काल के भवनों, मन्दिरों एवं शहरों के अवशेष पाए गए हैं। इन सबका यदि हम ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो हमारे सामने एक मुख्य तथ्य आता है कि पुरातन काल के भवनों, मन्दिरों एवं शहरों का धरातल वर्तमान धरातल से बहुत नीचे था। वर्तमान धरातल का पुरातन धरातल से ऊँचाई पर होना ही इस बात को बल देता है कि पर्यावरणीय शक्तियाँ निरन्तर अपनी क्रियाएँ निश्चित रूप से कर रही हैं। इन पर्यावरणीय शक्तियों में वायु का तीव्र गति से बहाव, वर्षा ऋतु में बरसने वाले जल तथा पर्वतों की कन्द्राओं से फूट निकलने वाली नदियों की धाराओं का बहाव मुख्य है। वायु-घर्षण के कारण पर्वतों की शिखाएँ एवं ऊपरी भागों की मिट्टी निरन्तर इसका शिकार हो रही हैं। वर्षा तथा पर्वत श्रृंखलाओं से निकलने वाली नदियों की तीव्र जलधाराएँ पर्वतों की मिट्टी को अपने साथ बहाकर धरातल में एकत्रित करती रहीं, जिसका परिणाम यह हुआ कि नदियों के तल-स्तर में तथा धरातल के तल-स्तर में ऊँचाई बढ़ने लगी।

और यही बात सिद्ध होती है पुरातत्त्व विभाग द्वारा खुदाइयों के दौरान विभिन्न स्थानों पर पुरातन काल के भग्नावशेषों के पाए जाने से।

बहुत पुरानी बात नहीं परन्तु यदि हम इस बात पर ध्यान दें तो इन्हीं प्राकृतिक शक्तियों की प्रक्रिया हमें अपने आसपास भी देखने में आ सकती है

उदाहरण हैं दिल्ली का ऐतिहासिक लाल किला व चाँदनी चौक। मुगल काल में बना लाल किला, जिसके चारों ओर गहरी खाई है तथा चाँदनी चौक, जहाँ लाल किला से निकलकर एक नहर बाजार के बीचोबीच चलती थी। जब लाल किला बना उस समय पृथ्वी का धरातल किले की वर्तमान नींव से नीचे था तथा उसके चारों ओर ऊँची दीवार खड़ी की गई थी, जो किले की सुरक्षा को ध्यान में रखकर बनाई गई थी। समय के साथ-साथ सारे शहर का धरातल शनैः-शनैः उठाया जाता रहा और आज स्थिति यह है कि शहर की सड़कों का धरातल किले की नींव से ही नहीं बल्कि किले की दीवार के भी कुछ भाग से ऊपर उठा हुआ है। चाँदनी चौक में भूस्खलन हुआ तो नीचे मुगलकालीन नहर के अवशेष दृष्टिगोचर हुए।

वास्तव में प्राकृतिक शक्तियाँ एवं यथाकाल आवश्यकताएँ निरन्तर भूमि के धरातल पर बदलाव लाने में कार्यरत हैं। यदि हम मुगलकालीन समय में बहने वाली यमुना नदी के स्तर का आज की यमुना नदी के स्तर से समीकरण करें, तो हम देखेंगे कि मुगलकालीन समय में स्तर आज के यमुना के स्तर से लगभग दस मीटर नीचे था। जलस्तर बढ़ना भी प्राकृतिक शक्तियों द्वारा ही सम्भव हुआ है।

हमारी दैनिक आवश्यकताओं एवं समस्याओं के समाधान के कारण ही भूतल ऊपर उठना संभव हुआ है। यदि हम सारी पृथ्वी को छोड़कर मात्र एक शहर के भूतल को ऊपर उठाने के लिए लाए गए ईंट. रोडी. मलबे. मिट्टी को ही लें तो हमें ज्ञात होगा कि कितनी बडी मात्रा में सारे शहर में मलबे की

और इस मलबे को जहाँ से भी खोदकर लाया गया
का वह भाग तो एक बहुत बड़ा लम्बा-चौड़ा व गहरा
बन गया होगा ।

ड़ बड़े पैमाने पर पृथ्वी की परत को एक स्थान से
रे स्थान पर डालकर उस स्थान का भूतल उठाने से
: का सन्तुलन प्रभावित नहीं हुआ होगा ? और फिर
ो विश्वव्यापी है ।
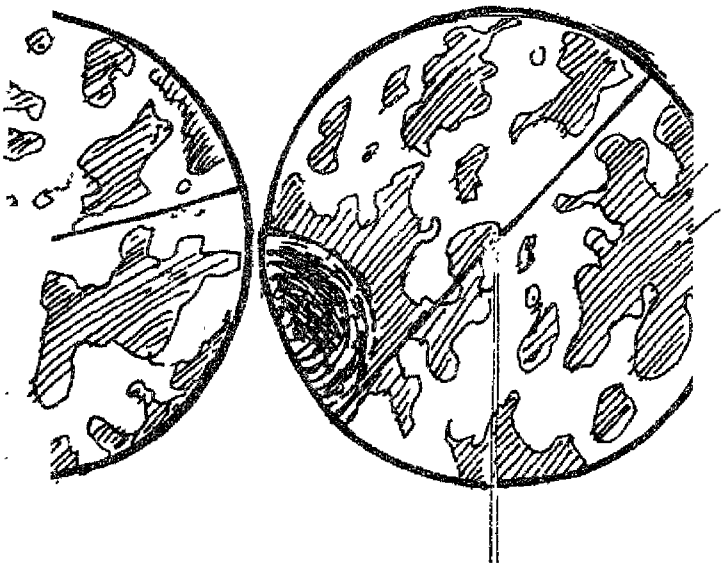
लित पृथ्वी ख. असंतुलित पृथ्वी

में भूमि पूर्ण रूप से संतुलित हैं एवं सामान्य रूप से
परन्तु चित्र ख में इसका बड़ा भू-भाग खोदकर दूसरे
ा उठाने के काम में लाया गया, इसी कारण भूमि का
वित हुआ ।

मनुष्य प्रारम्भ से ही वनस्पति व वन्य जीवों पर निर्भर रहा है। भूख मिटाने के लिए उसे प्रकृति से जो कुछ भोज्य पदार्थ मिल सकते थे या मिले वे सब सामयिक थे अर्थात् समयानुसार तथा ऋतु अनुसार ही मिलते थे। परन्तु भूख लगना तो एक नित्य क्रिया है। एक ऐसा राक्षस, जिसे प्रातः मार दो तो सायं फिर उठ खड़ा हो। उसे नित्य प्रति मारने के लिए नित्य प्रति भोज्य पदार्थों का उपलब्ध होना नितान्त आवश्यक है, परन्तु प्रकृति के नियम तो नियम ही हैं। ऋतु परिवर्तन काल में आगामी ऋतु के फल उगने में तथा बीती ऋतु के फल समाप्त होने में पर्याप्त समय ऐसा होता है जब फल लगते तथा पकते हैं। इसी मध्यावधि परिस्थिति से सामना करने के लिए मनुष्य ने मांसाहार आरम्भ किया होगा और धीरे-धीरे शाकाहारी से मांसाहारी बन गया होगा। नित्य प्रति भोजन जुटाने के कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु अनेक जीवों का वध किया होगा। यही कारण है कि आज अनेक प्रकार के विचित्र, सुन्दर तथा आकर्षक वन्य जीव लुप्त हो गए हैं। उनकी प्रजातियाँ भी नष्ट हो गई हैं। वातावरण के शनैः-शनैः बदलाव के कारण विपरीत परिस्थितियाँ उत्पन्न होने से कई प्रकार की वनस्पतियाँ एवं पक्षी भी आज लुप्त हो गए हैं।

जिस काल से मनुष्य ने घर बनाकर स्थायी जीवन व्यतीत करना आरम्भ किया उसी क्षण से अनेक प्रकार की सामग्रियाँ जुटाने तथा भूमि तत्त्वों के उपयोग से भूमि-संतुलन में विकार पैदा होने की परिस्थितियों का जन्म हुआ। यह प्रक्रिया अति धीमी गति से आरम्भ हुई परन्तु में इसके कुप्रभाव दृष्टिगोचर होने लगे

वास्तव में प्रारम्भ में पृथ्वी पर अति सुन्दर तथा अति विशाल जीव भी थे, जिनसे पृथ्वी की शोभा थी । सुन्दर, रंगबिरंगे, मधुर ध्वनियाँ करने वाले पक्षी । सुन्दर, विशालकाय डायनासोर तथा विशालकाय हाथी भी इसी पृथ्वी पर विचरण करते थे । यदि हम उस समय की वनस्पतियों की ओर ध्यान दें तो वास्तव में उस समय की वनस्पतियाँ भी बहुत शक्तिवर्द्धक
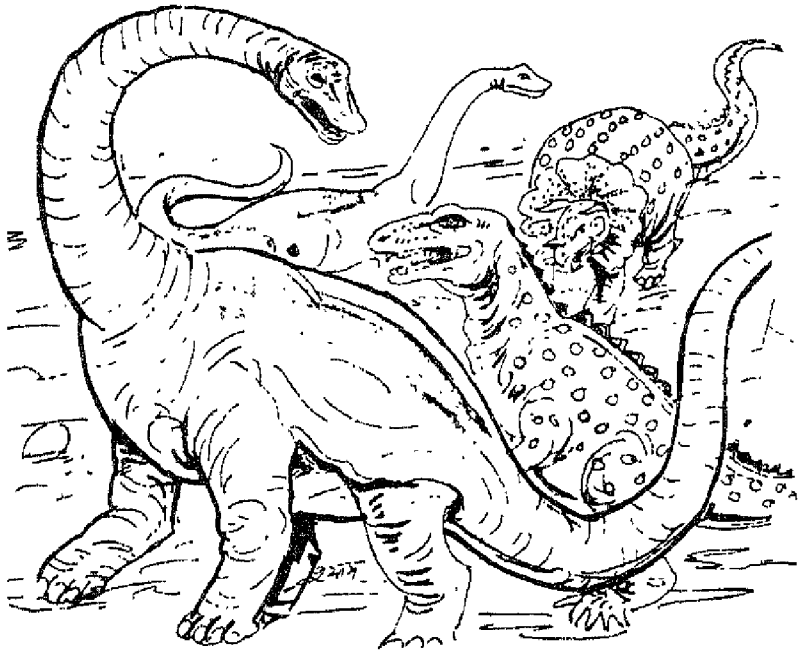
तत्त्वों से युक्त रही होंगी, जिनके भक्षण से विशालकाय तथा सामान्य जीव अपना भरण-पोषण तथा बल प्राप्त करते थे । परन्तु यह उस काल की बात है जब मानव-जीवन इस पृथ्वी पर विकसित नहीं हुआ था ।

आप यह प्रश्न करेंगे कि वे सुन्दर, विशालकाय जीव लुप्त क्यों हो गए ? जबकि उस काल में मानव द्वारा कोई ऐसी क्रिय

पृथ्वी पर नहीं हुई थी जिससे उन जातियों के जीवों का लोप हो । पृथ्वी पर डायनासोर युग मानव जाति या जीव-जन्तु जाति का प्रारम्भिक काल था । इसी कारण यहाँ विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ, जीव व पक्षी उत्पन्न हुए । हमारी पृथ्वी पर परिस्थितियाँ स्थिर नहीं हो पाई थीं, इसी कारण हमारे भूतल तथा वातावरण में निरन्तर बदलाव आ रहा था । इस प्रक्रिया के अन्तर्गत जो जीव अपने आपको बदलती परिस्थितियों के अनुकूल बना सके, वे जीवित रहे और अन्य जीव शनैः-शनैः लुप्त हो गए । परिस्थितियों का बदलाव प्राकृतिक भी हो सकता है, इसकी कुछ एक संभावनाएँ है :

प्रथम संभावना यह है कि उस काल में वातावरण हाइड्रोजन व नाइट्रोजन गैसों द्वारा निर्मित रहा होगा तथा विशालकाय डायनासोर तथा हाथी जैसे जीव नाइट्रोजन-भोगी जीव रहे होंगे, जो वातावरण की नाइट्रोजन पर निर्भर रहे होंगे तथा शनैः-शनैः पृथ्वी की परत के अन्दर तत्त्वों की रासायनिक क्रिया द्वारा ऑक्सीजन जैसे-जैसे वातावरण में अधिक मात्रा में बढ़ने लगी, उस समय इन जीवों का ऑक्सीजन प्रधान वायुमण्डल में श्वास लेना कठिन हुआ और सम्भवतः यही उनके लुप्त होने का कारण रहा होगा ।

एक दूसरी संभावना यह भी हो सकती है कि शीत युग हमारी पृथ्वी की रचना का प्रारम्भिक काल था । उस समय तक अन्तरिक्ष में उल्काओं तथा उल्का पिण्डों का अन्य सौर ग्रहों से टकराव एक प्राकृतिक क्रिया रही होगी इसी काल के दौरान कोई

बड़ा शक्तिशाली उल्का पिण्ड हमारी पृथ्वी से टकराया होगा और इससे पृथ्वी की संतुलन शक्ति क्षीण हो जाने के कारण पृथ्वी डगमगाई होगी जिससे इस आकस्मिक दुर्घटना के कारण पृथ्वी पर उथल-पुथल मची और सभी जीव इसके शिकार हुए होंगे। वास्तव में डायनासोर तथा हाथी इतने विशालकाय जीव थे कि उनके प्राकृतिक रूप से पृथ्वी पर विचरण करने की क्रिया से भी पृथ्वी की सतह पर हलचल मच जाया करती थी।

वास्तव में प्रकृति की रचना, क्रियाएँ तथा शक्तियाँ इतनी विचित्र हैं कि इनका चित्रण, लेखन या प्रसारण सम्भव नहीं है। यह एक दुर्गम प्रक्रिया है जो पुस्तकों एवं ग्रंथों के परिमाप में बाँधी नहीं जा सकती।

यह तथ्य प्रमाणित करने के लिए हम यही कहना उचित समझेंगे कि औसत मानव के आयु काल में जो प्राकृतिक रचनाएँ एवं प्रक्रियाएँ घटित होती हैं, उनका परिणाम लगभग शून्य ही होता है। प्रकृति की प्रत्येक क्रिया का परिणाम दृष्टिगोचर होने के लिए शताब्दियों का समय भी पर्याप्त नहीं है।

यही कारण है कि एक युग के अन्त के बाद दूसरा युग जब तक प्रगतिशीलता की सीमा के अन्दर प्रवेश करता है तब तक लाखों वर्षों का समय बीत चुका होता है।

पृथ्वी काँपने के कारण

हमारी पृथ्वी का काँपना अथवा इस पर भूचालों का आना भी कोई नई क्रिया नहीं है । वैसे देखा जाए तो सूर्य के अन्दर अनेक पदार्थों का विघटन ही इस पर भूकम्प पैदा करने में सक्षम रहा । इस भूकम्प की शक्ति का अनुमान मात्र इसी बात से हो जाएगा कि हमारे सौरमण्डल के सभी नौ ग्रह इससे ही विघटित हुए एवं छोटे तथा विशालकाय सभी भाग इससे करोड़ों मील की दूरी तक अन्तरिक्ष में जा गिरे और फिर पुनः कालान्तर में इसी की परिक्रमा परिधि में स्थापित हुए ।

प्रारम्भ से ही अन्तरिक्ष में अनेक उल्का पिण्डों का ग्रहों से टकराव समय-समय पर होता रहा, जिस कारण टकराने वाले उल्का पिण्डों ने या तो मुख्य ग्रह को विभाजित कर दिया या फिर उसी ग्रह में समा गए व उसका एक भाग बन गए । जो ग्रह विभाजित हुए उनसे अलग होने वाले भाग प्रायः उसी ग्रह के उपग्रह के रूप में मुख्य ग्रह की परिक्रमा करने लगे ।

उल्का पिण्डों के टकराव के कारण विघटित होने वाले ग्रह पृथ्वी, बृहस्पति, शनि, यूरेनस और नेपच्यून हैं । इन सबमें से सर्वाधिक विघटन बृहस्पति का हुआ, जिसके बारह उपग्रह उसकी परिक्रमा कर रहे हैं दूसरे स्थान पर टकराव के कारण विघटन

का शिकार शनि ग्रह बना, जिसके नौ उपग्रह उसकी परिक्रमा कर रहे हैं । इसी प्रकार यूरेनस का विघटन पाँच बार हुआ और नेपच्यून का दो बार । इस संदर्भ में पृथ्वी ग्रह भाग्यशाली रहा क्योंकि इसका विघटन एक बार ही हुआ और इसी कारण इसका एक उपग्रह है ।

हमारी पृथ्वी का एक उपग्रह है इसलिए यहाँ एक ही पूर्णमासी प्रतिमाह होती है । आइए, तनिक अन्य ग्रहों के उपग्रहों की जानकारी पृथ्वी के ही संदर्भ में कर लें ।

बृहस्पति के बारह उपग्रह हैं, इस कारण वहाँ पर तो प्रायः प्रति रात्रि एक न एक उपग्रह उस पर रोशनी बिखेरे रहता होगा । हो सकता है, उसके विशाल भूतल पर तीन, चार या पॉच उपग्रह एक साथ प्रकाश फैलाते हों । यह भी सम्भव है कि उन तीन, चार या पाँच उपग्रहों द्वारा फैलाया गया प्रकाश बृहस्पति ग्रह पर रात्रिकाल में अपर्याप्त होता हो, क्योंकि यह ग्रह हमारे सौरमण्डल का सबसे बड़ा ग्रह है ।

यदि इस टकराव की प्रणाली पर बल दिया जाए तो यह तथ्य सामने आएगा कि बृहस्पति ग्रह इन विभाजनों एवं टकराव द्वारा विघटन का मुख्य शिकार रहा होगा, क्योंकि इसके बारह उपग्रह हैं । और यदि अनुमान लगाएँ कि मूल रूप में बृहस्पति का आकार क्या होगा तो हम वास्तव में इसका अनुमान लगाने में भी सक्षम नहीं हैं ।

बृहस्पति के पश्चात् शनि यूरेनस व नेपच्यून भी ऐसे ग्रह

हैं जिनका अत्यधिक विघटन हुआ । पृथ्वी ग्रह इस मामले में भाग्यशाली रहा क्योंकि इस ग्रह के विघटनस्वरूप एक ही उपग्रह उत्पन्न हुआ ।

जैसाकि हम उल्लेख कर चुके हैं कि पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना तथा सूर्य की परिक्रमा करना कई प्राकृतिक शक्तियो द्वारा संचालित है । अतः यह कथन कि पृथ्वी स्वतन्त्र एवं स्वच्छन्द रूप में सूर्य की परिक्रमा कर रही है, एक भ्रान्तिपूर्ण कथन होगा । वास्तव में प्रकृति ने सम्पूर्ण सौरमण्डल का निर्माण किया है, इस कारण सम्पूर्ण सौरमण्डल को वे प्राकृतिक शक्तियाँ संचालित किए हुए हैं जिनकी परिधि में हमारी पृथ्वी कार्यरत है ।

यदि इन शक्तियों में से कोई एक भी शक्ति क्षीण हो जाए या प्रबल हो जाए तो इसका प्रभाव हमारी पृथ्वी को ही नही अपितु हमारी पृथ्वी के उपग्रह 'चन्द्रमा' तथा हमारे सौरमण्डल के अन्य ग्रहों को भी प्रभावित करेगा । इसके परिणाम हमारे अनुमान एवं विचारशक्ति की परिधि से परे की बात हैं ।

'ग्रेविटेशन फोर्स' जिसे आप गुरुत्वाकर्षण शक्ति कहते है, हमारी पृथ्वी पर बसे सभी प्रकार के प्राणियों, वस्तुओं, वनस्पतियों इत्यादि को अपनी ओर आकर्षित करती है । इस आकर्षण शक्ति का केन्द्र पृथ्वी के केन्द्र पर है ।

यही कारण है कि यदि हमारे वायुमण्डल में कोई चीज स्वतन्त्र रूप से आकाश की ओर फेंकी जाए तो वह पुनः पृथ्वी की ओर ही वापस आती है और पृथ्वी पर आ गिरती है

ाक्ति के कारण हमारी पृथ्वी पर अनेक प्रकार के
ों की सम्भावना हुई है।

साथ ही पृथ्वी पर हमारे वायुमण्डल का दबाव भी इस
ी भवनों, वृक्षों, पर्वतों आदि को स्थिर करने में सक्षम
लचर समुद्र में रहते हैं, इसी प्रकार मनुष्य भी वायु के
ल पर रह रहा है। इसी कारण वह वायुमण्डल के
भावित नहीं होता।

ाय शक्ति हमारी पृथ्वी के ध्रुवों पर प्रभाव डालती है
ारण हमारी पृथ्वी की दिशाओं में स्थिरता है। वास्तव
थ्वी एक विशाल चुम्बक है और इसका दक्षिणी ध्रुव
की ओर तथा उत्तरी ध्रुव दक्षिण दिशा की ओर स्थिर
ुम्बकीय शक्ति के कारण हमारी पृथ्वी पर दिशा-

परिवर्तन नहीं होता । अतः हमारी पृथ्वी पर सूर्य का पूर्व से उगना एवं पश्चिम में अस्त होना निश्चित हुआ है ।
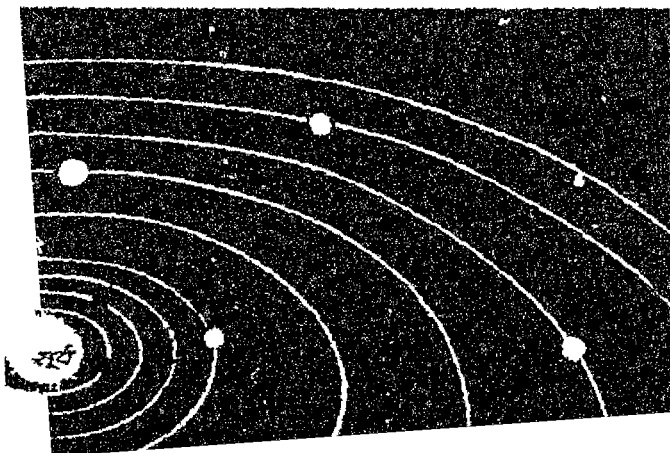
इसी प्रकार अनेक अन्य शक्तियों के प्रभाव के अन्तर्गत हमारी पृथ्वी स्थिर है तथा अनेक नियमों के अन्तर्गत सूर्य की परिक्रमा कर रही है ।

हमारी पृथ्वी प्रारम्भ काल में मूलतः एक भूखण्ड के रूप में ही प्रकट हुई, जो कि कई भूखण्डों का संयुक्त रूप थी । पृथ्वी के प्रारम्भिक काल की रचना को जानने के लिए हम निम्न शक्तियों का अध्ययन करेंगे तो हमें सुगमतापूर्वक इसकी वर्तमान स्थिति की परिस्थिति जानने में सहायता मिलेगी :

- गुरुत्वाकर्षण शक्ति
- वायुमंडलीय दबाव
- चुम्बकीय शक्ति
- गतिज शक्ति
- केन्द्रित शक्ति
- अवकेन्द्रित शक्ति
- आकर्षण शक्ति
- घर्षण शक्ति
- द्रव्य शक्ति
- विद्युतीय शक्ति

पृथ्वी तथा अन्य ग्रहों का प्रारम्भिक स्वरूप, जब वे सूर्य से विघटित हुए, वास्तव में विभिन्न प्रकार का था । कोई चतुर्भुजीय,

! अथवा अन्य प्रकार की आकृतियों में थे । परन्तु
ो धुरी पर तथा सूर्य की परिक्रमा के कारण इनके
अन्तरिक्ष में उपस्थित तत्त्वों से, जो द्रव्य रूप में थे,
रण इनकी आकृति वस्तुतः समय के अन्तराल में
और धीरे-धीरे इन ग्रहों की आकृति गेंदनुमा गोलाई

ग्री निरन्तर प्राकृतिक शक्तियों के अन्तर्गत सौरमण्डल
' इसलिए इस क्रिया ने पृथ्वी के वास्तविक रूप में
न्न करना प्रारम्भ कर दिया । प्रथम इसकी आकृति
ग शनैः-शनैः गोलाई में आने लगा तथा पृथ्वी
नेक भागों का संयुक्त रूप था, पृथ्वी के अन्दर
परिक्रमण की शक्तियों के कारण अनेक भू-भागों मे

विभाजित हो गया तथा रिक्त स्थानों पर जल एकत्रित होता रहा, जो अनेक युगों के अन्तराल में सागर एवं महासागरों के रूप में परिवर्तित हुआ ।

वास्तव में पृथ्वी हमारे सौरमण्डल का एक अनुपम ग्रह है । जब सूर्य का विभाजन या विघटन हुआ, विभिन्न आकारों के अनेक टुकड़े छिटककर अन्तरिक्ष में गिर पड़े तथा सूर्य से विभिन्न दूरियों पर जा गिरे । जो टुकड़ा जितना बड़ा था, छिटकते समय उसमें उतनी ही अधिक शक्ति थी, परिणामस्वरूप वह सूर्य से उतनी ही अधिक दूरी पर जा गिरा । यही कारण है कि हमारे सौरमण्डल में सूर्य से अत्यधिक दूरी वाला ग्रह अत्यधिक विशाल है और सूर्य के सबसे निकट वाला ग्रह बुध है जो सबसे छोटे आकार का है । परन्तु अपनी विषम दूरी के कारण इनमें कोई विषमता नहीं है । प्रत्येक ग्रह सूर्य की परिक्रमा कर रहा है और अपनी धुरी पर एक ही दिशा में घूम रहा है । इससे यह साधारण परन्तु अद्भुत बात साबित होती है कि प्रत्येक ग्रह पर सूर्य पूर्व से निकलता है तथा पश्चिम में अस्त हो जाता है । यह समानता सभी ग्रहों में है । दूसरी समानता यह भी है कि सभी ग्रहों की सूर्य-परिक्रमा की दिशा भी एक ही है, जिस कारण उन ग्रहों पर सूर्य की शक्ति समान रूप से घटती-बढ़ती रहती है अर्थात् ऋतुओं का निर्माण होता है ।

यह अलग बात है कि अन्य ग्रहों पर जीवन के विकास के लिए तत्त्वों का अभाव है परन्तु प्रत्येक ग्रह पर सूर्य

का प्रभाव समय-समय पर बदलता रहता है। ग्रह जितना सूर्य से अधिक दूरी पर होगा उतना ही उसका परिक्रमा मार्ग लम्बा होगा और उस ग्रह पर सूर्य का प्रभाव भी उतने अधिक समय के लिए होगा।

हमारे पृथ्वी ग्रह पर मनुष्य की औसत आयु 60 वर्ष है। यदि एक नवजात शिशु को यहाँ से बुध ग्रह पर भेजा जा सके या यूँ कहें कि उसका जन्म बुध ग्रह पर संभव हो सके तो उसकी आयु उस ग्रह के लगभग 250 वर्ष होगी।

वहीं दूसरी ओर यदि प्लूटो ग्रह पर मानव-शिशु का जन्म सम्भव हो सके तो उस मानव की आयु वहाँ के लगभग तीन माह के बराबर होगी, अर्थात् जन्म के एक माह उपरान्त ही उसकी दाढ़ी, मूँछ उग आएँगी तथा वह शादी योग्य हो जाएगा। उसकी शादी के मात्र चार दिन बाद ही उसके संतान उत्पन्न होगी। इसी प्रकार यूरेनस ग्रह पर जन्मे बालक की आयु वहाँ का एक वर्ष होगी। कैसा विचित्र लगता है यह सब और कितना हास्यप्रद !

यदि हम पृष्ठ 15 की सारणी को देखें तो पाएँगे कि बुध ग्रह मात्र 88 दिन में सूर्य की परिक्रमा कर लेता है अर्थात् इस ग्रह पर प्रत्येक ऋतु की अवधि मात्र 22 दिन की हुई। दूसरी ओर यदि हम प्लूटो ग्रह को लें तो वह सूर्य की एक परिक्रमा 248 वर्ष में पूरी करता है। इस बात से यह सिद्ध होता है कि उस ग्रह पर प्रत्येक ऋतु लगभग 62 वर्ष की होती है। यदि हम पृथ्वी को लें तो देखते हैं कि यहाँ प्रत्येक ऋतु लगभग 3 माह की होती है।

इन तथ्यों से यह सिद्ध होता है कि सूर्य का प्रभाव भि
भिन्न है। साथ ही यह बात भी प्रमाणित होती है कि
के जितना निकट है उसके धरातल का तापमान उतन
है। वस्तुतः बुध का तापमान सर्वाधिक तथा प्लूटो
न्यूनतम है।

पृथ्वी के परिक्रमा मार्ग से बाहर जिन ग्रहों के
है, उन ग्रहों पर तापमान पृथ्वी की अपेक्षा घटता ज
एक प्राकृतिक कारण है कि जीवन का विकास पृथ्वी
हुआ है। हमारी पृथ्वी के परिक्रमा मार्ग के निकटत
मंगल और शुक्र हैं तथा उनमें से भी शुक्र ग्रह
सम्भावना नहीं की जा सकती, क्योंकि यह पृथ्वी
सूर्य के निकट है और सम्भवतः इस ग्रह का ताप

सूर्य के तापमान से कहीं अधिक होगा । इस कारण शुक्र ग्रह पर जीवन की सम्भावनाएँ लगभग न के बराबर हैं । दूसरी ओर मंगल ग्रह पृथ्वी की तुलना में सूर्य से अधिक दूरी पर है । मंगल ग्रह के धरातल का तापमान पृथ्वी की तुलना में कम है । इसी कारण वहाँ कुछ विशेष एवं विचित्र वनस्पतियों व सूक्ष्म जीवों की उपस्थिति एवं विकास सम्भव हो सकता है । वैज्ञानिकों ने मंगल ग्रह पर कुछ निम्न श्रेणी के जीवों की उपस्थिति होने की सम्भावना व्यक्त की है ।

बृहस्पति, शनि, यूरेनस, नेपच्यून और प्लूटो इत्यादि ग्रह सूर्य से अत्यधिक दूरी पर हैं, इसी कारण वहाँ पहुँचने वाली सूर्य की किरणें बहुत कम तापमान की होती हैं, इसलिए इन सभी ग्रहो पर शीत युग चल रहा है । प्रायः ये सभी ग्रह बर्फ से ढके हैं या फिर इन पर विशाल रेगिस्तान हैं । कइयों के गिर्द रेत कणों के बादल बने हुए हैं । इसी कारण प्रायः ये सभी ग्रह जीवनरहित हैं । इन पर किसी प्रकार के भी जीवन की उत्पत्ति एवं विकास की सम्भावनाएँ ना के बराबर हैं ।

हमारी पृथ्वी के बारे में कुछ रोचक, विचित्र तथा स्तब्ध कर देने वाले आधारभूत तथ्य वैज्ञानिकों ने खोज निकाले हैं जो इस प्रकार हैं :

• हाल ही में हुई गणना के अनुसार समुद्र में लगभग 33 करोड़ घन मील पानी है और प्रति घन मील पानी में लगभग 60 जातियों के रासायनिक मूल तत्त्व घुले हुए हैं ।

• एक घन मील पानी में 4 अरब 30 करोड 70 लाख टन

ऑक्सीजन है और 50 करोड़ 90 लाख टन हाइड्रोजन है।

• यदि उसमें घुले व पिघले कुछ रासायनिक संघटनों के मूल तत्त्वों की बात करें तो एक घन मील पानी में निम्न घुले हुए रासायनिक तत्त्व पाये जाते हैं :

9 करोड़ 95 लाख टन क्लोरीन गैस
4 करोड़ 95 लाख टन सोडियम
61 लाख 50 हजार टन मैगनीशियम
42 लाख 40 हजार टन कैल्शियम
17 लाख 90 हजार टन पोटैशियम
1 लाख 32 हजार टन कार्बन
2350 टन नाइट्रोजन
235 टन आयोडीन
47 टन जस्ता
47 टन लोहा
47 टन एल्यूमीनियम
14 टन सीसा
1.4 टन चाँदी
130 कि० पारा
23 कि० हेलियम
20 कि० सोना

कुल 60 में से उपरोक्त 16 तत्त्वों का ही उल्लेख किया जा

सकता है, अन्य तत्त्वों की उपस्थिति सम्भवतः इतनी अधिक मात्रा में न होकर अत्यधिक कम है। यह भी हमें यहाँ कहना होगा कि अतिरिक्त तत्त्व हमारी पृथ्वी पर अनेक प्रकार के विविध जीवों को मुख्य रूप से प्रभावित करने में सक्षम नहीं हैं। इसी कारण उनका उल्लेख महत्त्वहीन हो जाता है।

पृथ्वी का वैज्ञानिक तथा प्राकृतिक इतिहास तो 52 करोड़ वर्ष पहले लिखना शुरू हुआ था, जो पृथ्वी की परतों के नीचे प्राचीन प्रणालियों तथा वनस्पतियों के अश्मीभूत अवशेषों के रूप में अंकित हुआ है।

हमारी पृथ्वी समय-समय पर प्राकृतिक शक्तियों में बदलाव के कारण सूर्य-पृथ्वी तथा पृथ्वी-चन्द्र का परिक्रमा मार्ग घटने के कारण डगमगाई है, यह एक सत्य है। इसी कारण पृथ्वी पर अत्यधिक ऊँचे ज्वार सागरों में उठे। कई सागर-तट के शहर एवं बन्दरगाह इससे प्रभावित हुए एवं क्षत-विक्षत हो गए। पृथ्वी की चालन-शक्ति में अस्थिरता आई, जिस कारण उसमें कम्पन्न उत्पन्न हो गया।

भूकम्प का जन्म

वास्तव में भूकम्प एवं ज्वालामुखी पर्वतों में घना सम्बन्ध है। पृथ्वी के जन्म के साथ ही भूकम्प का भी जन्म हुआ। कारण यह है कि लावारस के अन्दर भरी वायुओं को बाहर निकलना होता है और उन द्रव्यों के दबाव से लावारस भी उबलता है, उछलता है।

समय बीतते जाने पर पृथ्वी की सतह जमने के कारण अन्दर ही अन्दर द्रव्य का अत्यधिक दबाव रहता है तथा लावा की ऊपरी तह नीचे वाली तैरती लावा की तहों पर घना दबाव निर्मित करती है। परिणामतः इन्हीं दबाव-भरी द्रव्योंयुक्त लावा की तहों ने ज्वालामुखी का रूप धारण कर लिया। जिस स्थान पर पृथ्वी की ऊपरी सतह अन्दर के द्रव्य का दबाव सहन करने में असफल रही, उसी स्थान पर भीतरी द्रव्य पृथ्वी की सतह से फूट निकले। आग तथा लावायुक्त फव्वारे फूट पड़े। पृथ्वी के उस भू-भाग में हलचल मच गई तथा पृथ्वी इस प्रकार तैरती हुई प्रतीत होने लगी जैसे पानी पर लहरें तैरती हैं। इसे ही हम साधारण एवं सरल भाषा में भूकम्प कहते हैं।

पृथ्वी के जिस भाग में पृथ्वी की तहों के अंदर स्तर-भंग हुआ हो वहाँ पर चट्टानें एक-दूसरे पर आती हैं। भूकम्प के वक्त ऐसे स्तर-भंग में प्रक्षोभ होता है और टूटी-फूटी परतें मीलों दूर तक खिसक जाती है इससे ऊपरी परतों में अस्थिरता आ जाती

है तथा खलबली मच जाती है । जब भूकम्प आता है तो बड़े-बड़े मैदानी भागों में पृथ्वी इस प्रकार तैरती हुई मालूम होती है जैसे कि पानी की सतह पर एक पत्ता तैरता है ।
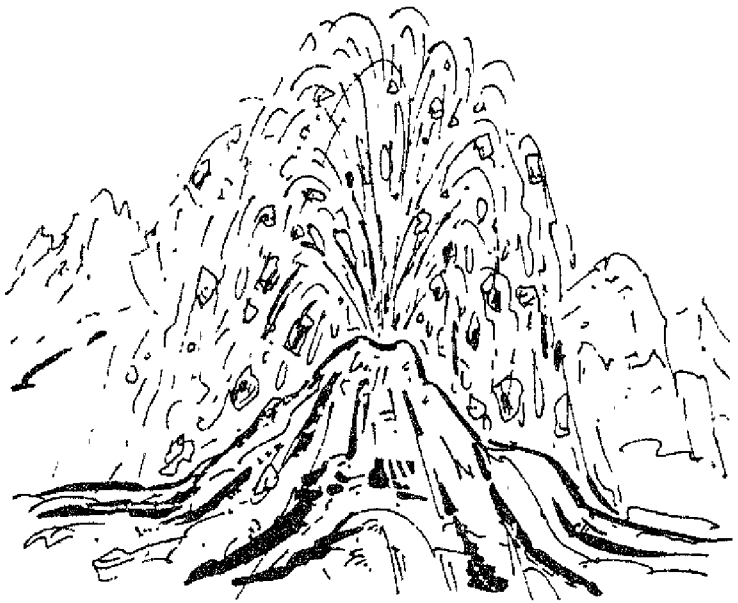
पृथ्वी पर भूकम्प क्षेत्र दो प्रकार के हैं । पहला वह जो कि समुद्र-तल में स्थित है । जहाँ का तला पतला है और साथ ही जहाँ की तह में स्तर भंग हुआ है । दूसरा ऊँची-ऊँची पर्वत शृंखलाएँ, जहाँ पर्वतों के उठने से धरती की परतें अस्तव्यस्त हो गई हैं और एक-दूसरे पर चढ़ गई हैं ।

संसार के सब भूखण्डों में प्रायः भूकम्प आते ही रहते है, परन्तु इसका 90 प्रतिशत भाग अर्थात् 90 प्रतिशत भूकम्प जापान, फिलीपीन्स, पश्चिम एशिया, ग्रीस, युगोस्लाविया, इटली तथा मास्को में आते हैं ।

भूकम्प का इतिहास

भूकम्प का भी अपना एक इतिहास है । भरत खंड में सबसे पुरानी भूकम्प की कथा अरब के इतिहासकारों ने लिखी है । उनके अनुसार 893 तथा 898 ई० में आए भूकम्प से दाइबुल या दाइगुल नाम की बन्दरगाह का विनाश हुआ था । इस भूकम्प में करीब 1,50,000 आदमी मारे गए थे । इसके पश्चात् 16वीं सदी के प्रारम्भ में 6 जुलाई, 1505 में एक प्रबल भूकम्प आने का उल्लेख मुस्लिम हस्तलिखित पुस्तकों में मिलता है । अफगानिस्तान तथा भारत को झकझोरने वाले इस भूकम्प मे केवल एक दिन में 33 झटके लगे । इससे पहाड़ टूट गए तथा अनेक घर नष्ट हो गए । जान-माल का भी भारी नुकसान हुआ । 17वीं सदी के आरम्भ में एक भूकम्प ने बम्बई में लगभग 2,000 व्यक्तियों की बलि ले ली । इसी सदी में समावाणी नामक शहर अपनी 30 हजार जनसंख्या के साथ पृथ्वी में समा गया । करीब उसी काल में औरंगज़ेब के समय में बम्बई की तरह ही सारे भारतवर्ष में उथल-पुथल मच गई । इसके अतिरिक्त एक उल्कापात भी हुआ । यह इतना जोरदार था कि इसके टकराव के कारण भूमि पर इतनी हलचल हुई कि तालाबों का पानी-छलक गया

18वीं सदी में दिल्ली में भी एक जोरदार भूकम्प आया था । अनेक किलों, मस्जिदों तथा मकानों को धराशायी करने वाला यह भूकम्प अपने वेग से अनेक मनुष्यों की बलि लेकर गया । यह भूकम्प एक माह तक चलता रहा था ।
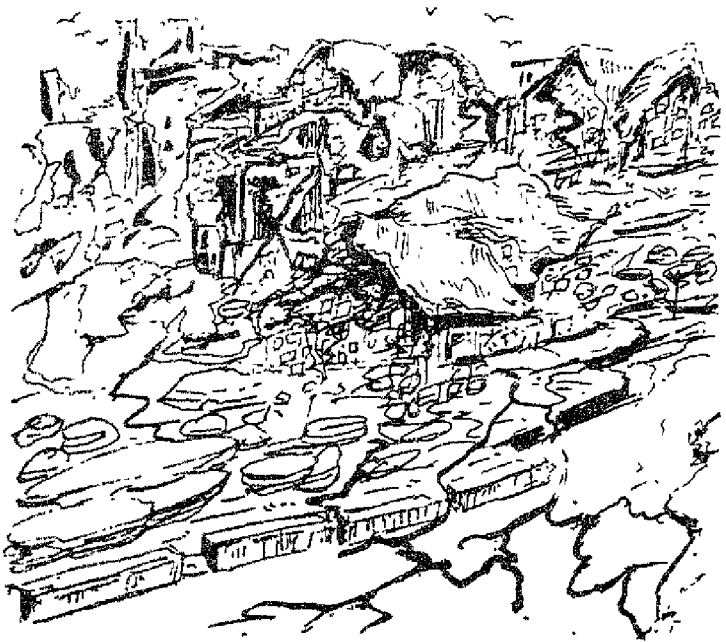
दिल्ली की ही तरह कलकत्ता तथा सुन्दर वन क्षेत्र भी प्रभावित हुए । अक्तूबर, 1737 में एक ऊँचा गिरजाघर अपने शिखर समेत पृथ्वी में समा गया । तीन लाख लोग मारे गए और 20 हजार नौकाएँ भूकम्पजन्य बवण्डर का शिकार हुईं । इसी समय अराकान तट प्रदेश का कुछ भाग समुद्र से ऊपर उठ आया । समुद्र-तल से 40 फुट ऊपर उठी हुई चट्टानों पर सीपे चिपकी हुई पाई गईं । इसका यही अर्थ है कि ऊपर उठने वाला भाग समुद्र-तल से अलग होकर ऊपर उठा था ।

19वीं सदी में उत्तरी भारत में भूकम्प का एक बड़ा भारी आक्रमण हुआ । कुमाऊँ से लेकर कलकत्ता तक हाहाकार मच गया । दिल्ली की प्रसिद्ध कुतुबमीनार का ऊपरी भाग टूटकर नीचे गिर गया ।

16 जून, 1819 में जो भूकम्प गुजरात में आया था वह सदा याद रहेगा । कच्छ का भुज नगर इसमें नष्ट हुआ तथा 2,000 व्यक्ति मारे गए । सिघड़ी नामक बन्दरगाह भूगर्भ में समा गई । इस भूकम्प की तीव्रता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि इसके कारण सिंधु की शाखा के प्रवाह के आड़े अचानक एक 15 मील चौड़ी जमीन ऊपर उठ आई तथा एक बाँध बन गया । इस भूकम्प का असर सारे गुजरात पर छा गया और महाराष्ट्र में पूना तक पहुँच गया । अहमदाबाद में भी काफी नुकसान हुआ ।

इसी सदी में लाहौर, कश्मीर, कुमाऊँ, गढ़वाल और नेपाल में भी भूकम्प से अत्यधिक हानि हुई ।

19 फरवरी, 1842 में आए भूकम्प ने भारत एवं अफगानिस्तान को झकझोर दिया । इसमें अफगानिस्तान के जलालाबाद शहर का एक-तिहाई भाग नष्ट हो गया । पेशावर में जान-माल का बहुत नुकसान हुआ । यहाँ पर बहने वाले कुछ गर्म झरने ठंडे हो गए । इस भूकम्प से 2,16,000 वर्ग मील क्षेत्र में हाहाकार मच गया । दक्षिण पठार जो कि लावारस से बना है, मार्च-अप्रैल, 1843 में आए भूकम्प से काँपने लगा सोलापुर करनूल और

फेलारी आदि शहरों में भयंकर नुकसान हुआ। लगभग 125 वर्ष बाद 11 सितम्बर, 1967 को पूना के पास कोयना में फिर से भूकम्प आया। इसी सदी के अन्त में बंगाल की खाड़ी मे भूकम्प आया। वह इतना व्यापक था कि दक्षिण में कालिकट तथा उटकमंड तक, उत्तर भारत में आगरा और मुंगेर तक तथा पूर्व में बर्मा तक उसके झटके लगे। बीस लाख वर्ग मील पर छाए हुए इस भूकम्प से बर्मा में कीचड़ का एक ज्वालामुखी फटा था।

भारत में शायद असम ने सबसे ज्यादा भूकम्प सहे है। परन्तु भूकम्प हमेशा आबादी वाले इलाके में ही नहीं होता। 12 जून, 1897 में भूकम्प से शिलांग, गोहाटी, सिलहट तथा गोलपाड़ा आदि कई नगर धराशायी हो गए। साथ ही बंगाल तथा कलकत्ता में भी इस भूकम्प ने काफी हानि की। यह भूकम्प जो 19 लाख वर्ग मील से भी अधिक क्षेत्र में फैला था, उससे 200 मील लम्बे तथा 50 मील चौड़े विस्तार वाले पहाड़ भी अपनी जगह से हट गए थे। 1600 से अधिक व्यक्ति इस भूकम्प से मारे गए। जैसे किसी ढोल पर मटर के दाने रखकर बजाएँ तो दाने उछलते हैं, उसी प्रकार उस भूकम्प से धरती पर से शिलाएँ उछलती थीं। मैदानी भागों में धरती जगह-जगह फट गई थी और उसमें से पानी तथा रेत के तीन-चार फुट ऊँचे फुहारे फूट पड़े थे। नदी-नालों में रुकावट होने के कारण उनमें पानी एकत्र हो गया और बाढ़ आ गई, कई जगह पहाड़ टूटकर नदियों में गिर गए। इस कारण भी प्रभावित क्षेत्रों में बाढ आ

गई । चित्रांग नदी के इलाके में पृथ्वी 2 फुट से 35 फुट तक ऊँची-नीची हो गई । पर्वतों की ऊँचाई भी टूटने के कारण घट गई । भूकम्प लहरों की गति 7,200 मील प्रति घंटा की थी तथा उसका स्थान 5 मील से भी कम गहराई पर था । इतनी वेगवान गति से आता भूकम्प निश्चय ही विनाश की ताण्डव लीला का दूसरा रूप था ।

4 अप्रैल, 1905 में पंजाब, कांगड़ा तथा कुल्लू में हुए भूकम्प की लहरें, ज्वार की लहरों की तरह उत्तर की ओर से दक्षिण की ओर गईं और पुनः लौटकर उत्तर में आ गई थीं । इस भूकम्प की गति भी लगभग दो मील प्रति सैकिण्ड थी । 16 लाख 25 हजार वर्ग मील क्षेत्र में फैला यह भूकम्प प्रातःकाल हुआ था । इससे बहुत-से लोग अपने घरों और बिस्तरों में ही फँस गए थे । कांगड़ा तथा धर्मशाला नामक पहाड़ी शहर धराशायी हो गए थे । इस भूकम्प में लगभग 20,000 मनुष्य मारे गए । विनाश का दूसरा दृश्य मसूरी व देहरादून के बीच था । पश्चिम में सिन्ध तथा अफगानिस्तान, दक्षिण में ताप्ती नदी तथा पूर्व में गंगा के मुहाने तक फैले इस भूकम्प का भयंकर प्रकोप था ।

11 सितम्बर, 1967 को प्रातःकाल से कुछ पहले कोयना नदी के बाँध के पास एक ऐसा भूकम्प आया कि लगभग सारा कोयना नगर नष्ट हो गया, आसपास के देहातों में अनेक घर ढह गए और लगभग 175 आदमी मारे गए । इसका झटका उत्तर में सूरत से लेकर दक्षिण में गोवा तथा बंगलौर तक लगा इस

क्षेत्र के लोगों पर मानसिक प्रभाव पड़ा, क्योंकि यह इलाका भूकम्प से मुक्त समझा जाता था। इसी कारण सरकार ने इस क्षेत्र मे करोड़ों रुपए लगाकर जल विद्युत् परियोजना आरम्भ की थी। यदि इस भाग में और भूकम्प आए तो इस बार बिल्कुल बच जाने वाले बाँध व बिजली कारखाने नष्ट हो जाएँगे और कोयना तथा कृष्णा के तट प्रदेशों के लाखों लोगों की जिन्दगी खतरे मे पड़ जाएगी।

कोयना में यह कोई पहला भूकम्प नहीं था। 1961 में आए भूकम्प में बाँध के पीछे पानी इकट्ठा हो गया तथा शिवसागर बना, तब हल्के-हल्के झटके लगने शुरू हो गए थे। 13 सितम्बर, 1967 के दिन पहली बार भारी झटका लगा, जिससे धरती में दरारें पड़ गईं और इमारतों को नुकसान हुआ।

जो दक्खन प्रदेश भूकम्प की दृष्टि से सुरक्षित माना जाता था वहाँ ऐसा भूकम्प होने का क्या कारण हो सकता था ? वास्तव में दक्खन प्रदेश सुरक्षित जरूर माना जाता है, परन्तु पश्चिम घाट की पर्वतमाला के निर्माण के कारण किनारे का प्रदेश स्थिर नहीं है। यह स्तर भंग क्षेत्र है। भारत में स्तर भंग वाला यह सबसे बड़ा प्रदेश समझा जाता है। इसी से भरत खंड के पश्चिमी प्रदेश की भूमि[illegible] समुद्र में डूब गई है और पश्चिमी घाट की पर्वतमाला का निर्माण हुआ है।

माना जाता है कि स्तर भंगों का नीचे के लावारस से सम्बन्ध होता है। लावारस पर इन [illegible]दानों की परतें सरकती है

और भूकम्प आता है, परन्तु ऐसा बराबर नहीं होता । यही कारण है कि हिमालय में जैसे बार-बार भूकम्प आते हैं वैसे इधर नही आते ।

समुद्र क्षेत्र में जब भूकम्प आता है तो उसमें अत्यधिक ऊँचाई की लहरें उठती हैं । उनका बल उनकी ऊँचाई में नहीं बल्कि उनकी गति में होता है । परन्तु ज्यों-ज्यों ये लहरें तट के पास पहुँचती हैं, पानी छिछला होता है और ये ऊपर की ओर उठती है । जब ये लहरें किनारे पहुँचती हैं तो इनका सारा पानी उतर जाता है जिससे जहाज समुद्र के तल पर खड़े हो जाते हैं ।

भूकम्प के दौरान समुद्र में जो लहरें एक-दो फुट ऊँची होती हैं, किनारों पर पहुँचते ही उनकी ऊँचाई 40-50 फुट हो जाती है । 1955 में आए भूकम्प ने पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन का नाश किया । उस भूकम्प द्वारा उत्पन्न लहरों के कारण काबीज बन्दरगाह में ज्वार की स्थिति में उठने वाली लहरों की ऊँचाई से भी 50 फुट अधिक ऊँची लहरें उठी थीं । इन लहरों को अटलांटिक के दूसरे किनारे पर पहुँचने में केवल 9 घंटे 30 मिनट लगे थे । वेस्टइंडीज टापुओं पर चढ़कर इन लहरों ने भारी उपद्रव मचाया था जिससे जान-माल की हानि हुई थी ।

1838 में अमेरिका के किनारे 3,000 वर्ग मील के क्षेत्र में भूकम्प हुआ, जिसके परिणामस्वरूप, बन्दरगाह में से 40 फुट पानी खिंच गया, सारे जहाज, कीचड़ में जमीन पर बैठ गए । ततपश्चात् जब भूकम्पीय लहरें पलटकर आई तो उन्होंने इन

जहाजों को उठाकर जमीन पर लगभग चौथाई मील दूर फेंक दिया। जब कभी समुद्र-तट का पानी दूर चला जाए तो चेतावनी समझकर हमें ऊँचे स्थानों पर चढ़ जाना चाहिए। 1946 में हवाई टापुओं पर अचानक पानी गायब हो गया। जो लोग इसे समझ न सके और कौतूहलवश किनारे पर इकट्ठे होकर देखते रहे वे अपनी कहानी कहने को जीवित भी न रहे।

2,000 मील दूर एल्युशियन टापुओं में प्रशान्त महासागर और उत्तरी ध्रुव महासागर की सीमा पर एक गहरी खाई में भूकम्प हुआ था तथा उससे उत्पन्न समुद्री लहरें आने से पूर्व किनारे का पानी 500 फुट दूर चला गया और फिर कुछ ही क्षणों में भारी ज्वार में आने वाली लहरों से भी अधिक ऊँची लहरें आ धमकीं। ये तूफानी लहरें घहराती, वेग के साथ भँवर बनाती चढ़ती आ रही थीं, जिनके साथ-साथ बड़ी-बड़ी चट्टानें भी खिंची चली आ रही थीं। इससे बड़े-बड़े मकान टूटकर बह गए। इसके पश्चात् हवाई जहाजों और जलयानों ने समुद्र में बहते-छटपटाते मानव-समुदाय को बचाने के लिए घंटों तक भारी परिश्रम किया।

जापान, फिलीपीन्स और प्रशान्त महासागर के अनेक हिस्सों ने सागर तले होने वाले भूकम्पों को अनुभव किया है और जान-माल की भारी हानि सही है।

वर्तमान काल में पानी के नीचे उत्पन्न होने वाले भूकम्पों की सूचना पहले से ही दी जा सकती है तथा इसके प्रकोप से कुछ हद तक बचा जा सकता है।

1755 का लिस्बन का भूकम्प स्मरण रहेगा। उस काल में

इन प्राकृतिक आपदाओं की जानकारी न के बराबर थी। परन्तु इनके प्रभाव का अध्ययन करने की प्रेरणा हमें तब से ही मिली। आज भूकम्प की अग्रिम सूचना देना इस कारण से संभव है, क्योंकि वैज्ञानिकों ने एक यन्त्र इस हेतु निर्माण कर लिया है जिसे सैस्मोग्राफ कहते हैं।

पृथ्वी के अन्दर करीब 40 मील तक गहराई में, जहाँ जमी हुई परन्तु गरम परत पूरी होती है और लावारस शुरू होता है, उस सीमा को, खोज करने वाले वैज्ञानिक की स्मृति में, 'मोहो' कहा गया है।

भूकम्पों की कहानी का यहाँ पर ही अन्त नहीं होता। वास्तव मे यह कहानी तो प्रतिपल संसार के किसी न किसी भाग में घटित हो रही है। हमारे देश में आने वाले सबसे अधिक शक्तिशाली तथा विनाशकारी भूकम्पों में 21 अगस्त, 1988 को आने वाला भूकम्प है, जिसने बिहार में अत्यधिक विनाशलीला रची। प्रातः का समय तथा लोग अभी अंगड़ाइयाँ ले ही रहे थे कि अनायास लोगों के घर जोर-जोर से हिलने लगे। इधर-उधर भागो-भागो की आवाजें लगाते लोग जिस स्थिति में भी थे, घरों से बाहर खुले मे निकल पड़े। यह बिहार में आने वाले 1934 के भूकम्प के बाद दूसरा विनाशकारी भूकम्प था।

1994 में उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र उत्तरकाशी में भी भूकम्प से बहुत हानि हुई। सर्दियों का मौसम और उस पर आधी रात का समय। पहाड़ों पर बनी पथरीली दीवारों तथा टीन की छतों से बने घर। भूकम्प के अधिक झटके सहने में अपने

आपको असमर्थ पाकर कुछ धराशायी हो गए तथा उनके नीचे अनेक बेचारे मासूम तथा अनभिज्ञ लोग चिरनिद्रा की गोद मे पहुँच गए। अधिकतर मकान इतनी दयनीय स्थिति में हो गए कि उनमें रहना तो मात्र यमदेव को निमन्त्रण देना ही था। केवल 15 दिन के अन्तराल में पुनः झटके महसूस किए गए तथा जो कुछ मकान बच गए थे, उनकी दीवारों में एक से दो फुट चौड़ी दरारे पड़ गईं। जो व्यक्ति बच गए वे ठंड के मौसम में रातों को खुले स्थान में ठिठुरती सर्दी को कैसे झेल पाए इसका अनुमान लगाने मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

भूकम्पों की एक विचित्र कहानी है। एक सत्य घटना तो मानो यह सिद्ध भी करती है कि भूकम्प से भी अधिक जरूरी अन्य नित्यप्रति के कार्यक्रम हैं। सेना में एक सिपाही अपनी नौकरी पर तैनात था। उसने रेडियो पर सुना कि उत्तरकाशी में भूकम्प आया है। उसके माता-पिता तथा पैतृक स्थान काशीपुर में ही था। उसने अपने अधिकारियों से छुट्टी ली और अपने गाँव चल पड़ा। वहाँ पहुँचकर उसने जाना कि उसके माता-पिता, घर इत्यादि सुरक्षित है, परन्तु विध्वंस अधिक हुआ था। वह अपना घायलों के प्रति उत्तरदायित्व जानकर उन्हें उपचार के लिए निकटस्थ स्वास्थ्य केन्द्र में पहुँचाने में व्यस्त हो गया। घायलों की मरहमपट्टी तथा देखभाल में समय न जाने कैसे पंख लगाकर उड़ गया। उसकी छुट्टी खत्म हुए कई सप्ताह बीत चुके थे अतः समय पर नौकरी पर वापस न लौटने के कारण उच्चाधिकारियों ने उसे नौकरी से निलम्बित कर दिया है न यह एक विचित्र स्तब्ध करने

योग्य घटना !

इसके उपरान्त भूकम्प ने महाराष्ट्र में नासिक शहर पर अपने हस्ताक्षर किए । इस क्रिया के दौरान भी अत्यधिक नुकसान हुआ । हजारों लोगों को एक साथ यमदेव ने अपनी गोद में सुरक्षा दी । हजारों व्यक्ति दुर्घटना का शिकार हुए । शहर की अधिकतर इमारतें क्षतिग्रस्त हुईं । रेल की पटरियाँ टूट गई तथा अनेक पालतू जानवर इस भूकम्प में मारे गए । कारण यही रहा कि जानवर अपने खूँटों से अपने आपको मुक्त न कर सके और भूकम्प की अग्रिम चेतावनी विचित्र ध्वनियाँ उत्पन्न करके देने लगे । परन्तु उन बेजुबानों की भाषा कोई समझने वाला नहीं था । अगर किसी को इस चेतावनी की भाषा समझ आ पाती तो शायद इतनी अधिक क्षति न होती । परन्तु प्रकृति का नियम कितना विचित्र जान पड़ता है कि जिन्हें भूकम्प का पूर्वाभास हो जाता है वे अपने बचाव के लिए कुछ कर नहीं पाते और जिन्हें कुछ कर पाने की शक्ति मिली है उन्हें पूर्वाभास नहीं होता ।

भूकम्प से बचाव

भूकम्पों का आना-जाना तो लगा ही रहेगा। हम उन्हें रोक नहीं सकते, परन्तु उनके आने की मात्रा में कमी हो, इसके लिए अपना योगदान अवश्य दे सकते हैं।

इस कार्य को सफल बनाने हेतु हमें प्राकृतिक संसाधनों का मात्रा से अधिक उपयोग, या यूँ कहें कि दुरुपयोग रोकना होगा। पृथ्वी पर हमारी मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी करने की पूर्ण क्षमता है, परन्तु हमारे लालच की पूर्ति करने की क्षमता इसमें नहीं है।

भूकम्प आना एक प्राकृतिक क्रिया है। यह भी सत्य है कि इसे रोक पाने में हम प्रायः असहाय हैं; परन्तु जो क्रियाएँ इसे जन्म देने में सहायक हैं वे सभी मानव-रचित हैं। यदि हम उन पर अंकुश लगाएँ तो वास्तव में वे सभी प्रयत्न भूकम्प रोकने में लाभकारी होंगे।

इस दिशा में हमारा प्रथम प्रयास है जंगलों की कटाई तथा भूमि की खनन क्रियाओं पर प्रतिबंध लगाना।

विशाल जल परियोजनाओं तथा जल सरोवरों के निर्माण पर प्रतिबंध लगाना। विशाल औद्योगिक इकाइयों के फैलाव पर प्रतिबंध लगाना।

रासायनिक अस्त्रों के निर्माण एवं परीक्षणों पर रोक लगाना

तथा ऊर्जा के लिए प्राकृतिक तथा वातावरण सहयोगी संसाधनों को उपयोग में लाना ।

बड़े पैमाने पर प्रदूषणरहित इकाइयों को प्राथमिकता देना तथा जंगलों के नवनिर्माण हेतु अधिक से अधिक वृक्षों को लगाना । जंगलों का निर्माण बहु उपयोगी क्रिया है । इनसे वातावरण शुद्ध होता है, फल-फूलों की प्राप्ति होती है, भूमि-कटाव पर नियंत्रण रहता है, पृथ्वी का तापमान भी वृक्षों द्वारा नियन्त्रित रहता है तथा सूखा व बाढ़ जैसी परिस्थितियों पर भी हमारे जंगलों द्वारा अंकुश लगाने में सहायता मिलती है ।

हमारी प्रत्येक आवश्यकता भूमि से जुड़ी है तथा उन सब आवश्यकताओं के लिए हम समय-समय पर, अनजाने में ही कोई न कोई हानिकारक गतिविधि भूमि पर करते रहते हैं । वास्तव में हमें अपने द्वारा की गई अवांछित क्रियाओं के परिणाम का आभास जब होता है तब बहुत देर हो चुकी होती है तथा समस्याएँ विकराल रूप धारण कर चुकी होती हैं ।

अतः किसी भी प्रकार की गतिविधि से पूर्व हमें उसके दूरगामी दुष्प्रभावों की समीक्षा करनी चाहिए । यदि समय व परिस्थितियाँ सहायक हों तथा दूरगामी प्रभाव शून्यमात्र हों तब ही हमें उस गतिविधि पर काम करना चाहिए ।

वातावरण के प्रदूषण पर रोक लगानी चाहिए क्योंकि भूकम्प के विषय में वातावरण की भी एक मुख्य भूमिका है ।

गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों को प्रोत्साहन देना चाहिए । जहाँ

तक सम्भव हो कृषि के लिए जल आपूर्ति प्राकृतिक क्रियाओं द्वारा ही की जानी चाहिए। इस विषय में हमारे पास दूसरा माध्यम है सौर ऊर्जाचालित पम्पों का, जिनकी सहायता से हम भूमिगत जल द्वारा कृषि के लिए जल प्राप्त कर सकते हैं और साथ ही पर्यावरण के प्रदूषण पर भी रोक लगा सकते हैं।

विशाल बहुमंजिले आवासीय व व्यावसायिक भवनों के निर्माण पर भी रोक लगाना आवश्यक है, क्योंकि भूकम्प आने की स्थिति में इन्हीं भवनों को सबसे अधिक क्षति का भय रहता है।

भवन-निर्माण के लिए कृत्रिम पदार्थों का उपयोग भी इस दिशा में बहुत सहायक होता है। भवन-निर्माण के क्षेत्र में कृत्रिम पदार्थों की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

यदि हम पृथ्वी तथा उस पर बने जल भाग में पुनः सन्तुलन स्थापित कर पाने में सफल हो गए तो समझ लें कि तदुपरान्त आने वाले समय में भूकम्प की क्रिया एक प्रकार से शून्य ही हो जाएगी।

भूकम्प उन्मूलन अभियान में एक अन्य सत्य भी सहायक होगा और वह सत्य है जनसंख्या-वृद्धि पर अंकुश लगाना तथा वन्य प्राणियों व पक्षियों को भी वनों के साथ-साथ संरक्षण प्रदान करना।

वास्तव में प्रत्यक्ष रूप से हमारी पृथ्वी पर जनसंख्या-वृद्धि भी भूकम्प को जन्म देने वाले मुख्य कारणों में से एक है, क्योंकि अधिक जनसंख्या का तात्पर्य है, अधिक खाद्य पदार्थ, अधिक

भवन, अधिक नगर, अधिक लकड़ी, अधिक खानें तथा अधिक जंगलों का विनाश ।

वास्तव में इस पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधनों के विनाश का बीज बोने के लिए हम स्वयं ही उत्तरदायी हैं और इसका पश्चात्ताप हमें इसके नवनिर्माण द्वारा ही करना है ।

एक अटल सत्य यह भी है कि जिस प्रकार प्राकृतिक सम्पदा के सन्तुलन को अस्तव्यस्त करने में हमें बहुत समय लगा है उसके अनुपात में वही अधिक समय हमें इनके निर्माण में लगेगा । इन निर्माण की गतिविधियों को धैर्यपूर्वक तथा अथक प्रयासों द्वारा निरन्तर सफल बनाने की अति आवश्यकता है ।

इस विश्वास के साथ कि 'अन्तिम विजय हमारी ही होगी', आइए, हम सब मिलकर इस पृथ्वी को भूकम्प की विनाशकारी पीड़ा से मुक्त करने का वचन लें तथा अविलम्ब इसके उन्मूलन की दिशा में अथक उत्साह के साथ अग्रसर हों ।

□□

आत्मविकास एवं जीवनोपयोगी साहित्य

वीर बालक बनें	*जगतराम आर्य*
देशभक्त बनें	*जगतराम आर्य*
आदर्श विद्यार्थी बनो	*जगतराम आर्य*
चरित्र-बल	*जगतराम आर्य*
सफलता का रहस्य	*जगतराम आर्य*
एकता, निर्भयता और सदाचार	*जगतराम आर्य*
युग-निर्माता स्वामी दयानंद	*जगतराम आर्य*
महान् देशभक्त स्वामी श्रद्धानन्द	*जगतराम आर्य*
दिव्य पुरुष - गुरु नानक देव	*जगतराम आर्य*
सच्चे बच्चे कितने अच्छे	*जगतराम आर्य*
सच्चाई की करामात	*जगतराम आर्य*
प्राचीन भारत के महावीर	*धर्मपाल शास्त्री*
विद्यार्थी जीवन में उन्नति के उपाय	*कृष्ण विकल*
अमर शहीद : चन्द्रशेखर आजाद	*व्यथित हृदय*
महर्षि दयानन्द सरस्वती	*चन्द्रपाल सिंह 'मयंक'*
भारत माँ की पुकार	*चन्द्रपाल सिंह 'मयंक'*
स्वतंत्रता संघर्ष का इतिहास	*हजारीप्रसाद द्विवेदी*
माँ ! मैं क्या बनूँ ?	*निरंकार देव सेवक*
शिक्षा तथा लोक-व्यवहार	*महर्षि दयानन्द सरस्वती*
भारत मे शासन और शासक कैसा हो	*महर्षि दयानन्द सरस्वती*
सारा जहां हमारा (पुरस्कृत)	*शंकर बाम*
संसार की बाल विभूतियाँ (पुरस्कृत)	*शंकर बाम*
वैभवशाली कैसे बनें	*जेम्स ऐलन*

प्रेरक तथा रोचक बालोपयोगी कहानियाँ

अच्छी-अच्छी कथाएँ	*जगतराम आर्य*
पूर्वजों की कथाएँ	*जगतराम आर्य*
धार्मिक कथाएँ	*जगतराम आर्य*
कहावतों की कहानियाँ	*ओम्प्रकाश सिंहल*
देश-प्रेम की कहानियाँ	*ज़हीर नियाज़ी*
देशभक्ति की कहानियाँ	*ज़हीर नियाज़ी*
हास्यप्रद कहानियाँ	*हरिकृष्ण देवसरे*
पेड़, पशु-पक्षियों की कहानियाँ	*रामनिरंजन शर्मा 'ठिमाऊ'*
बस्ता बोला	*प्रमोद जोशी*
कर भला हो भला	*विजय अग्रवाल 'रजनीश'*
गागर में सागर	*ब्रजभूषण*
प्यारी-प्यारी कहानियाँ	*अशोक*
विधिना तेरी गति लखि ना परै	*श्रीचन्द्र जैन*
भारत की श्रेष्ठ लोककथाएँ	*श्रीचन्द्र जैन*
एशिया की श्रेष्ठ लोककथाएँ	*प्रह्लाद रामशरण*
कहानियाँ पढ़ें बुद्धि बढ़ाएँ	*धर्मपाल शास्त्री*
बिटिया रानी सुनो कहानी	*जयप्रकाश भारती*
पंचतंत्र की अमर कहानियाँ	*व्यथित हृदय*
गुणों की कहानियाँ	*व्यथित हृदय*
मूर्ख धोबी	*जयव्रत चटर्जी*
भरोसा	*रत्नलाल शर्मा*
जादुई अंडा	*शिवनारायण सिंह*